



ए.एफ.आर

## छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (एल) क्रमांक 207/2019

आदेश सुरक्षित दिनांक : 08.04.2024

आदेश दिनांक : 26.06.2024

साउथ ईस्टर्न कोलफील्डस लिमिटेड

द्वारा महाप्रबंधक, साउथ ईस्टर्न कोलफील्डस

लिमिटेड, हसदेव क्षेत्र, दक्षिण झगराखाण्ड

कॉलरी, जिला कोरिया (छ 0 ग 0)

..... याचिकाकर्ता

//विरुद्ध//

1. क्षेत्रीय श्रमायुक्त (केन्द्रीय मेन रोड,  
तोरवा, बिलासपुर, जिला-बिलासपुर  
(छ 0 ग 0)
2. नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन ट्रेड यूनियन  
(एनएफआईटीयू) श्रमिक सदन, अपोलो  
फार्मैसी के सामने, मेन रोड, विद्या नगर,  
बिलासपुर, जिला- बिलासपुर (छ 0 ग 0)
3. राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर कांग्रेस (पंजीकरण क्रमांक 22, 1948)  
मुख्यालय बी/21-22, इंदिरा विहार, सीपत  
रोड, जिला बिलासपुर (छ 0 ग 0) द्वारा  
महासचिव डॉ० दीपक जायसवाल आ 0  
स्व 0 श्री रामस्वरूप जायसवाल, उम्र लगभग



57 वर्ष, निवासी अपोलो फार्मसी के सामने,  
मेन रोड, विद्या नगर, बिलासपुर, थाना तारबाहर,  
जिला- बिलासपुर(छ 0 ग 0) .....प्रत्यर्थीगण

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री अजीत सिन्हा, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री विनोद देशमुख व  
सुश्री डायना बजरंग, अधिवक्ता

उत्तरदाता क्रमांक 1 के लिए : श्री रमाकांत मिश्रा, (Dy. S.G.)

उत्तरदाता क्रमांक 2 के लिए : श्रीमती शरमिला सिंघाई, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्रीमती आर्ची  
अग्रवाल, अधिवक्ता

उत्तरदाता क्रमांक 3 के लिए : श्री प्रफुल्ल एन. भरत, वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री संजय पटेल  
एवं श्री ऋषि राहुल सोनी, अधिवक्ता

माननीय न्यायमूर्ति श्री नरेन्द्र कुमार व्यास

सीएवी आदेश

1. याचिकाकर्ता ने क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी), बिलासपुर (सीजी) द्वारा प्रकरण क्रमांक बीएसपी-7(03)/2018-आरएलसी में पारित दिनांक 28.12.2018 (अनुलग्नक पी/1) के आदेश को निरस्त करने हेतु यह रिट याचिका प्रस्तुत की है, जिसके द्वारा उत्तरदाता क्रमांक 1 ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33(सी)(1) के तहत याचिकाकर्ता को निर्देशित किया गया था कि वह संदर्भित प्रकरण क्रमांक 6/89 में पारित अवार्ड के अनुसार दावा राशि की गणना एवं निर्धारण



करे और "देय धन" का पता लगाए या दिनांक 22.09.1992 के समझौते के अनुसार या जहां इसे श्री निवास गुरीजाला और 134 अन्य के संबंध में इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से 30 दिनों की अवधि के भीतर श्रमिकों की पहचान और सत्यापन के पश्चात बिना किसी विवाद के काम किया जा सकता है। याचिकाकर्ता ने कारण बताओ नोटिस दिनांक 15.04.2019 और 22.08.2019 (अनुलग्नक पी/1) को रद्द करने की भी प्रार्थना की है, जिसके द्वारा उत्तरदाता क्रमांक 2 ने याचिकाकर्ता को निर्देश दिया है कि सूची में उल्लिखित 135 श्रमिकों के 55,807,4256.38 रुपये की वसूली के लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 33 (सी) (1) के तहत सक्षम प्राधिकारी को राजस्व वसूली प्रमाण पत्र जारी करके याचिकाकर्ता के विरुद्ध समुचित कानूनी कार्रवाई क्यों न प्रारंभ की जाए।

2. अभिलेख से परिलक्षित संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार है कि दिनांक 23.09.1989 को एस.ई.सी.एल. हसदेव क्षेत्र और म.प्र.कृ.वि.सं.(एच.एम.एस.) के मध्य समझौता हुआ था कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10-ए सहपठित औद्योगिक विवाद (केन्द्रीय) नियम, 1957 के नियम 7 के तहत संविदा कर्मियों के नियमितीकरण से संबंधित विवाद को समुचित सरकार द्वारा नियुक्त मध्यस्थ के पास प्रेषित किया जाए। तदनुसार, मामले को निम्नलिखित शर्तों को संदर्भित करते हुए मध्यस्थ के पास भेजा गया:-

“क्या हसदेव क्षेत्र के टब-मरम्मत के श्रमिकों/ संविदा कर्मियों के नियमितीकरण की संघ की मांग न्यायोचित है ? यदि नहीं, तो



श्रमिक किस अनुतोष को प्राप्त करने के अधिकारी हैं? "

3. उक्त संदर्भ को संदर्भ क्रमांक 6/89 के रूप में पंजीकृत किया गया था और विद्वान मध्यस्थ ने अपने निर्णय के पैराग्राफ 6.16 में अपने निष्कर्ष को निम्नानुसार उल्लेखित कर 30.08.1990 को निर्णय पारित किया :-

" ए.एल.सी.(सी)/सी.एल.सी.(सी) को यूनियन द्वारा प्रबंधन को सौंपी गई कामगारों की सूची के आधार पर, अप्रैल 1988 से पहले ही एस.ए.एम.एस के माध्यम से जांच की जा चुकी है, अब प्रबंधन का यह कहना कि यूनियन की सूची पर संज्ञान नहीं लिया जाना उचित प्रतीत नहीं होता है, जबकि केस क्रमांक 3/89 में दाखिल डब्ल्यू-7 की सूची को स्वीकार किया था और एस.ई.सी.एल ने अस्वीकार नहीं किया था। इसी प्रकार, आरकेकेएमएस (इंटक) ने आर्बिट्रेशन क्रमांक 10/11/89 के दौरान डब्ल्यू-8 पर केस क्रमांक 4/89 में 26 कामगारों की सूची दाखिल की है, जिनमें दक्षिण जे.के.डी. के 22 और उत्तर जे.के.डी के 4 कामगार शामिल हैं। इन दस्तावेजों को एस.ई.सी.एल ने अस्वीकार नहीं किया । 6.16.1- केस क्रमांक 5/89 में एस.के.एम.एस (एआईटीयूसी) और केस क्रमांक 6/89 में एन.सी.डब्ल्यू.एफ ने आर्बिट्रेटर के समक्ष ऐसी कोई सूची दाखिल नहीं की थी। हालांकि, मौखिक साक्ष्य में एस.के.एम.एस ने दो गवाह डब्ल्यूडब्ल्यू-1 और डब्ल्यूडब्ल्यू-2 दोनों राजनगर कॉलरी से थे,



NCWF ने बिजुरी से दो और राजनगर से एक गवाह पेश किया था।  
WW-1 बिजुरी में पूर्व कामगार था, WW-2 राजनगर कॉलरी और  
WW-3 बिजुरी ने गवाही दी कि वे टब मरम्मत के कार्य में संविदा  
कर्मचारी थे। सूक्ष्म जाँच करने पर ज्ञात हुआ कि केस क्रमांक 3/89  
और 4/89 में दाखिल सूची में राजनगर कॉलरी के नाम नहीं हैं, जहाँ  
23 कामगारों के नाम बताए गए हैं और उसके पश्चात अंतिम आवार्ड  
पारित किया गया।

पैराग्राफ 6.23(ए) इस प्रकार है:-

6, 23(ए) उपरोक्त निष्कर्ष से मेरे विचार में, यूनियनों के मामले औचित्यपूर्ण है। परिणामतः मैं पाता हूँ कि हसदेव क्षेत्र में टब रिपेयरिंग नौकरियों के लिए संविदात्मक कार्य/श्रमिकों के नियमितीकरण के लिए यूनियन की मांग उचित है।

(बी) चूंकि यह मुद्दा वर्षों से लंबित है और यूनियन लगातार इस पर काम कर रही हैं, इसलिए न्याय तभी होगा जब 1 दिसंबर 1988 से विभागीकरण किया जाए, जिस महीने में सुलह अधिकारी (ए.एल.सी(सी) शहडोल एक सुलह समझौता तैयार करेंगे जिससे एस.ई.एल.एल हसदेव क्षेत्र प्रबंधन मध्यस्थता के लिए सहमत हो जाएगा और इस मुद्दे को हमेशा के लिए हल कर देगा।





(सी) इन श्रमिकों को दिनांक 1.12.88 से सभी परिणामी लाभों के साथ विभागीयकृत करने के बाद, यदि प्रबंधन को बाद में पता चलता है कि इस श्रेणी में कर्मचारियों की क्रमांक आवश्यकता से अधिक है, तो वह अतिरिक्त टब मरम्मत मजदूरों को हसदेव क्षेत्र के किसी भी उप-क्षेत्र में अन्य नौकरियों में नियोजित कर सकता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि उन्हें द्वितीय श्रेणी कर्मचारियों को प्राप्त वेतन एवं अन्य लाभ मिलते रहें।

(घ) मामले की परिस्थितियों को देखते हुए, वाद व्यय के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया गया।

4. याचिकाकर्ता की ओर से तर्क है कि मध्यस्थता अवार्ड के अनुपालन में याचिकाकर्ता ने उन सभी व्यक्तियों को रोजगार दिया जिनके नाम यूनियनों द्वारा मध्यस्थ के समक्ष व्यक्त किए गए थे और इस प्रकार, मध्यस्थता अवार्ड का अक्षरशः अनुपालन किया गया। यह निवेदन किया गया है कि उत्तरदाता क्रमांक 2, जो कि एनसीडब्ल्यूएफ के उत्तराधिकारी है, के द्वारा माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका प्रस्तुत की गई, जिसे एमपी क्रमांक 1322/1994 के रूप में पंजीकृत किया गया था, जिसमें उत्तरदाता क्रमांक 2 द्वारा व्यक्त किया गया था कि वे मध्यस्थ के समक्ष श्रमिकों की सूची व्यक्त नहीं कर सके और उक्त याचिका का निपटारा माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 10.11.2005 (अनुलग्नक



पी/3) के आदेश द्वारा किया गया था, आदेश का प्रभावी भाग इस प्रकार है:-

"प्रतिपक्ष याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क किया है कि पहचान के संबंध में इस न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए उत्तरदाता क्रमांक 1/क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), जबलपुर को मध्यस्थ द्वारा पारित अवार्ड में दिए गए दावों को प्रभावी बनाने के प्रयोजनों के लिए सत्यापन करना चाहिए था और चूंकि उत्तरदाता क्रमांक 1/क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), जबलपुर द्वारा इन तर्कों पर विचार करते हुए और न्याय के हित में कोई सत्यापन नहीं किया गया है, इसलिए याचिका उत्तरदाता क्रमांक 1 क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), जबलपुर को एक सरल निर्देश के साथ किया जा सकता है कि वह पारित आदेश की प्राप्ति की तारीख से तीन महीने की अवधि के अंदर याचिकाकर्ता/संघ के अभ्यावेदन पर विचार करें और विधि के अनुसार उचित आदेश पारित करें। अस्वीकृति की दशा में, कारण बताते हुए एक तर्कसंगत आदेश पारित करेगा"।

5. यह निवेदन किया गया है कि माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश के अनुपालन में, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी) ने पक्षों के बीच एक बैठक आयोजित की, जिसमें याचिकाकर्ता ने आर.एल.सी के समक्ष स्पष्ट रूप से व्यक्त किया था कि अवार्ड को पूर्णतः लागू किया गया है, क्योंकि उत्तरदाता क्रमांक 2 द्वारा व्यक्त सूची कभी भी मध्यस्थ के समक्ष नहीं थी। उक्त सूची पर विचार किए बिना,



उत्तरदाता क्रमांक 2 ने अपने ज्ञापन दिनांक 22.02.2006 के माध्यम से याचिकाकर्ता को सूचित किया है कि समुचित केन्द्रीय सरकार के द्वारा अभियोजन हेतु कार्यवाही प्रारंभ की जा सकती है।

6. उत्तरदाता क्रमांक 2/यूनियन ने पुनः माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर प्रधान पीठ के समक्ष रिट याचिका WP क्रमांक 5920/2007 दायर कर क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी), जबलपुर द्वारा दिनांक 22.02.2006 को पारित कार्यवाही आदेश के कार्यान्वयन और मध्यस्थ द्वारा पारित अवार्ड के कार्यान्वयन के लिए प्रार्थना की गई। उक्त रिट याचिका क्रमांक 5920/2007 में उत्तरदाता क्रमांक 1 से 4 ने यह तर्क देते हुए अपना जवाब दाखिल किया कि उत्तरदाता क्रमांक 2/यूनियन द्वारा दाखिल की गई सूची कभी भी मध्यस्थ के समक्ष व्यक्त नहीं की गई और केवल एम.पी क्रमांक 1322/1994 में उन्होंने उन श्रमिकों की सूची दाखिल की है जिनके लिए वे नियमितीकरण का दावा कर रहे हैं। उत्तरदाता क्रमांक 1 से 4 द्वारा यह भी तर्क किया गया कि रिट याचिका क्रमांक 5920/2007 को उस मामले के याचिकाकर्ता यानी वर्तमान में उत्तरदाता क्रमांक 2 द्वारा 08.03.2017 को बिना शर्त वापस ले लिया गया।

7. यह भी तर्क दिया गया है कि इसके बाद उत्तरदाता क्रमांक 2/संघ ने उत्तरदाता क्रमांक 1 को एक अभ्यावेदन दिया गया कि अवार्ड का अनुपालन नहीं किया गया है, ऐसे अभ्यावेदन के आधार पर, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी), बिलासपुर द्वारा याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस दिनांक 20.09.2018 जारी



किया गया था। इसके पश्चात याचिकाकर्ता ने 04.12.2018 को उक्त कारण बताओ नोटिस दिनांक 20.09.2018 पर अपना उत्तर प्रस्तुत किया, जिसमें उत्तरदाता क्रमांक 1 के सभी दावों का खंडन किया गया, याचिकाकर्ता द्वारा अपने उत्तर में किए गए प्रस्तुतीकरण पर विचार किए बिना, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी), जबलपुर ने दिनांक 20.09.2018 के आदेश के तहत इसे खारिज कर दिया। दिनांक 28.12.2018 को याचिकाकर्ता को निर्देश जारी करके दावा राशि की गणना और निर्धारण करने और संदर्भ मामले क्रमांक 06/89 में पारित भावे अवार्ड के अनुसार या 22.09.1992 के समझौते के अनुसार या जहां यह श्री निवास गुरीजला और 134 अन्य के संबंध में किसी भी विवाद के बिना काम किया जा सकता है, इस आदेश की प्राप्ति की तारीख से 30 दिनों की अवधि के भीतर श्रमिकों की पहचान और सत्यापन के बाद "देय धन" का पता लगाने के लिए याचिका दायर करते समय इस आदेश को चुनौती नहीं दी गई थी और उसके बाद याचिकाकर्ता ने 2020 के आई.ए नंबर 6 को दाखिल करके इस न्यायालय के समक्ष संशोधन के लिए एक आवेदन दिया। उक्त आवेदन को इस न्यायालय ने 30.11.2023 को अनुमति दी थी। इस न्यायालय ने उत्तरदाता को याचिकाकर्ता द्वारा किए गए संशोधन पर अतिरिक्त रिटर्न दाखिल करने का भी निर्देश दिया है। दिनांक 28.12.2018 को पारित आदेश के बाद, उत्तरदाता क्रमांक 1 ने याचिकाकर्ता को दिनांक 15.04.2019 और 22.08.2019 (अनुलग्नक पी/1) को कारण बताओ नोटिस जारी किया है कि क्यों न एस.ई.सी.एल के खिलाफ उचित कार्रवाई शुरू की जाए और नोटिस प्राप्त होने के 15 दिनों के भीतर स्पष्टीकरण



व्यक्त करने का भी निर्देश दिया है कि अवार्ड का क्रियान्वयन क्यों नहीं किया गया है, ऐसा न करने पर उत्तरदाता क्रमांक 1 के पास औद्योगिक विकास अधिनियम, 1947 के प्रावधानों के तहत वसूली के माध्यम से कानूनी कार्रवाई शुरू करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है इसलिए, यह याचिका दिनांक 28.12.2018 के आदेश और दिनांक 15.04.2019 और 22.08.2019 के कारण बताओ नोटिस को रद्द करने के लिए दायर की गई है।

8. राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर कांग्रेस ने रिट याचिका में हस्तक्षेप के साथ-साथ उत्तरदाता के रूप में पक्षकार बनने के लिए एक आवेदन दायर किया है। उक्त आवेदन को इस न्यायालय ने 14.10.2019 को स्वीकार कर लिया और इस न्यायालय ने उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा मांगी गई राशि का 50% जमा करने तथा शेष राशि की वसूली करने का निर्देश देकर याचिकाकर्ता के पक्ष में अंतरिम स्थगन प्रदान किया है तथा अगले आदेश तक राशि पर रोक लगाई। इस न्यायालय ने आगे निर्देश दिया है कि जमा की गई राशि बैंक की सावधि जमा में रखी जाएगी जो इस रिट याचिका के अंतिम निर्णय के अधीन होगी।

9. अंतरिम आदेश से व्यथित होकर याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय की माननीय खंडपीठ के समक्ष रिट अपील क्रमांक 528/2019 प्रस्तुत की। माननीय खंडपीठ द्वारा दिनांक 28.11.2019 के आदेश द्वारा अंतरिम आदेश को निम्नानुसार संशोधित किया गया है:—

"याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया है कि पहचान के संबंध में इस



न्यायालय के निर्णय पर विश्वास व्यक्त करते हुए उत्तरदाता क्रमांक 1/ क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), जबलपुर को मध्यस्थ द्वारा पारित अवार्ड में दिए गए दावों को प्रभावी करने के प्रयोजनों के लिए सत्यापन करना चाहिए था और चूंकि उत्तरदाता क्रमांक 1/क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), जबलपुर द्वारा इन तर्कों पर विचार करते हुए और न्याय के हित में कोई सत्यापन नहीं किया गया है, इसलिए याचिका का निपटारा उत्तरदाता क्रमांक 1 क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (केन्द्रीय), जबलपुर को एक साधारण निर्देश के साथ किया जा सकता है कि वह आज पारित आदेश की प्राप्ति की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर याचिकाकर्ता/संघ के अभ्यावेदन पर विचार करें और कानून के अनुसार उचित आदेश पारित करें। अस्वीकृति किये जाने की दशा में कारण बताते हुए एक तर्कसंगत आदेश पारित करेगा।

10. उत्तरदाता क्रमांक 1 ने अपना जवाब मुख्यतः यह तर्क देते हुए प्रस्तुत किया है कि श्री दीपक जायसवाल, अध्यक्ष, राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर कांग्रेस (आर.सी.एम.सी) और राष्ट्रीय अध्यक्ष, भारतीय राष्ट्रीय व्यापार संघ (एन.एफ.आई.टी.यू) से प्राप्त कई शिकायतों के आधार पर याचिकाकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी किए गए हैं, जिसमें श्री एच.जी भावे द्वारा संदर्भ क्रमांक 06/89 में सुनाए गए मध्यस्थता अवार्ड को आईडी अधिनियम, 1947 के प्रावधानों के अनुसार लागू नहीं करने का आरोप लगाया गया है। यह भी तर्क दिया गया है कि संदर्भ केस क्रमांक 06/89 में



मध्यस्थता अवार्ड में, साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड, हसदेव क्षेत्र यूनियन राष्ट्रीय कॉलरी श्रमिक महासंघ पक्षकार थे जिसका नाम बदलकर राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर कांग्रेस नहीं किया गया है। आगे यह तर्क दिया गया है कि अवार्ड के अवलोकन मात्र से यह स्पष्ट है कि संघ ने एस.ई.सी.एल हसदेव क्षेत्र में टब-मरम्मत कार्य में लगे ठेका श्रमिकों के विभागीकरण की मांग उठाई थी। माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने विविध याचिका क्रमांक 1322/94 में 08.11.2005 को निर्णय पारित किया है और उत्तरदाता क्रमांक 1 से 4 को संघ के प्रतिनिधित्व पर पुनर्विचार करने और उचित आदेश पारित करने हेतु निर्देशित किया गया, जिसके अनुपालन में आर.एल.सी (सी), जबलपुर ने अपने आदेश दिनांक 22.02.2006 के तहत याचिकाकर्ता को विवादित बिंदु अर्थात् अवार्ड के कार्यान्वयन न करने पर संघ के साथ द्विपक्षीय समझौता/त्रिपक्षीय समझौता/मध्यस्थता समझौता करने का परामर्श दिया था।

जवाब में यह भी तर्क दिया गया है कि मध्यस्थ के समक्ष संघ का विवाद संविदा पर कार्यरत टब-मरम्मत करने वाले श्रमिकों के नियमितीकरण के लिए था, लेकिन संघ अवार्ड पारित होने से पहले मध्यस्थ के समक्ष सूची प्रस्तुत नहीं कर सका। लेकिन संघ ने बाद में आर.एल.सी (सी), जबलपुर के समक्ष सूची दायर की और इस पर माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने विचार किया और तदनुसार आर.एल.सी (सी), जबलपुर को श्रमिकों के नियमितीकरण के बारे में संघ की मांग पर पुनर्विचार करने का निर्देश दिया और जिसके अनुपालन में आर.एल.सी (सी) ने एसईसीएल के प्रबंधन को संदर्भ प्रकरण क्रमांक 06/89 में समझौता करके अवार्ड को लागू करने की सलाह दी



थी, ऐसा न करने पर अभियोजन प्रारंभ किया जा सकता है। तदनुसार, आरएलसी (सी) जबलपुर ने पाया है कि एसईसीएल प्रबंधन द्वारा अवार्ड को उसके मूल रूप में लागू नहीं किया गया है और याचिकाकर्ता की ओर से यह कहना सही नहीं है कि श्रमिकों के पक्ष में कोई अवार्ड नहीं है। उत्तरदाता क्रमांक 1 ने 28.12.2018 के आदेश को पारित करते समय याचिकाकर्ता और संघ द्वारा की गई दलीलों पर विचार कर उचित तर्कपूर्ण आदेश पारित किया गया। इस प्रकार 28.12.2018 के आदेश को पारित करने में कोई अवैधता नहीं है। चूंकि उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा पारित आदेश का अनुपालन नहीं किया गया, इसलिए उत्तरदाता क्रमांक 1 ने याचिकाकर्ता को विभिन्न नोटिस जारी किए और बाद में 15.04.2019 और 22.08.2019 के नोटिस उन्हें जारी किए गए। उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा याचिकाकर्ता को वसूली की कार्यवाही शुरू करने के लिए नोटिस जारी किए गए हैं। आक्षेपित आदेश दिनांक 28.12.2018 एवं पश्चातवर्ती नोटिस विधिपूर्ण एवं न्यायोचित होने से इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है और याचिका को खारिज किए जाने का अनुरोध किया जाएगा।

11. प्रत्यर्थी क्रमांक 3 ने अपना जवाब मुख्यतः यह तर्क देते हुए दाखिल किया है कि प्रत्यर्थी क्रमांक 3- राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर कांग्रेस (संक्षेप में आर.सी.एम.सी) एक पंजीकृत ट्रेड यूनियन है, जिसका प्रारंभ (वर्ष 1948 में) एमपी कॉलरी श्रमिक संघ मनेन्द्रगढ़ के नाम से हुआ एवं तत्पश्चात प्रत्यर्थी क्रमांक 3/यूनियन का नाम वर्ष 1962 में एमपी कॉलरी वर्कर्स फेडरेशन मनेन्द्रगढ़ से मध्य प्रदेश कॉलरी मजदूर



संघ, वर्ष 1988 में मध्य प्रदेश कॉलरी मजदूर संघ से राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर महासंघ, वर्ष 1997 में राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर महासंघ से राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर महासंघ तथा अन्त में वर्ष 2003 में राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर महासंघ से राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर कांग्रेस कर दिया गया। यह तर्क दिया गया है कि वर्ष 1988 में प्रत्यर्थी क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी (जो उस समय एन.सी.डब्ल्यू.एफ अर्थात् राष्ट्रीय कॉलरी मजदूर संघ के नाम से जाना जाता था) द्वारा एक विवाद उठाया गया था, फेडरेशन ने टब मरम्मत कर्मचारियों के नियमितीकरण/विभागीकरण के संबंध में याचिकाकर्ता कंपनी के समक्ष एक मामला दायर किया था, जो ठेकेदारों के माध्यम से काम कर रहे थे और हसदेव क्षेत्र में ठेके के आधार पर काम कर रहे थे। आगे यह भी तर्क दिया गया है कि दिनांक 23.09.1989 को याचिकाकर्ता कंपनी और उत्तरदाता नंबर 3 यूनियन आर.सी.एम.सी (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ के नाम से जाना जाता था) के बीच मध्यस्थता के माध्यम से विवाद के निपटारे के लिए एक समझौता किया गया था और श्री एच.जी भावे को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 ए के तहत मध्यस्थ के रूप में स्वीकार किया गया था।

12. यह निवेदन किया गया कि समझौते के समय, हसदेव क्षेत्र में कार्यरत 135 टब मरम्मत श्रमिकों (सतीश चंद्र और 134 अन्य) का प्रतिनिधित्व उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ नाम दिया गया था) द्वारा किया जा रहा था और उक्त समझौते को उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ नाम दिया गया था) द्वारा उक्त 135 व्यक्तियों की ओर से निष्पादित किया गया था, जिसका उल्लेख



समझौते में भी किया गया है। 05.10.1989 को, मध्यस्थता समझौते को राजपत्र अधिसूचना में प्रकाशित किया गया था और फिर उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन आर.सी.एम.सी (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ नाम दिया गया था) का मामला संदर्भ मामला क्रमांक 06/1989 के रूप में पंजीकृत किया गया था। उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ नाम दिया गया था) के मामले की सुनवाई तीन अन्य यूनियनों एमपीआरएमएसआरकेकेएमएस और एस.के.एम.एस द्वारा उठाए गए तीन अन्य मामलों के साथ की गई थी। जहाँ तक उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन RCMC (तत्कालीन नाम NCWF) के मामले का सवाल है, इसे संदर्भ केस क्रमांक 06/89 के रूप में पंजीकृत किया गया था। उन्होंने आगे कहा कि 30.08.1990 को, दिनांक 30.08.1990 (अनुलग्नक P/2) का अवार्ड मध्यस्थ द्वारा पारित किया गया था। उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-RCMC (तत्कालीन नाम NCWF) के तत्कालीन महासचिव श्री जीपी शर्मा ने एक दृष्टिकोण अपनाया । दिनांक 04.10.1990 को संदर्भ केस क्रमांक 06/89 में पारित मध्यस्थता अवार्ड के अनुपालन के लिए और 135 टब मरम्मत श्रमिकों के विभागीयकरण के लिए प्रार्थना की, जिनका प्रतिनिधित्व उत्तरदाता नंबर 3 यूनियन- आर.सी.एम.सी (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ नाम दिया गया) ने उनकी ओर से मध्यस्थता समझौते पर हस्ताक्षर करके किया था । दिनांक 04.02.1992 को, उत्तरदाता नंबर 3 यूनियन- आर.सी.एम.सी (तब एन.सी.डब्ल्यू.एफ नाम दिया गया) द्वारा क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) जबलपुर के समक्ष भावे अवार्ड के कार्यान्वयन के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। दिनांक



01.04.1993 को, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) जबलपुर द्वारा 01.04.1993 का आदेश पारित किया गया और इस आशय की सूचना देकर कि आगे कोई कार्रवाई की आवश्यकता नहीं है, मामला बंद कर दिया गया।

13. यह भी तर्क दिया गया है कि वर्ष 1994 में उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी (तत्कालीन नाम एन.सी.डब्ल्यू.एफ) द्वारा एम.पी क्रमांक 1322/1994 के तहत एक रिट याचिका दायर की गई थी, जिसमें क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) जबलपुर द्वारा पारित दिनांक 01.04.1993 के आदेश को चुनौती दी गई थी और 10.11.2005 को रिट याचिका एमपी क्रमांक 1322/1994 का निपटारा क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) जबलपुर को उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी (एन.सी.डब्ल्यू.एफ) के अभ्यावेदन पर तीन माह की अवधि के भीतर विचार करने और विधि अनुसार उचित आदेश पारित करने हेतु निर्देशित किया गया था। आगे यह तर्क दिया गया है कि 22.02.2006 को क्षेत्रीय श्रमायुक्त जबलपुर द्वारा आदेश पारित किया गया था और एसईसीएल के प्रबंधन को सलाह दी गई थी कि वे विवादित बिंदु (अर्थात् संदर्भ प्रकरण क्रमांक 06/89 में पारित मध्यस्थता अवार्ड का कार्यान्वयन न करना) पर अभियोजन कार्यवाही से बचने के लिए उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन के साथ द्विपक्षीय समझौता/त्रिपक्षीय समझौता/मध्यस्थता समझौता करें। यह मानते हुए कि यह अवार्ड अभी भी बाध्यकारी है। यह भी तर्क दिया गया है कि वर्ष 2007 में, उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन आर.सी.एम.सी द्वारा डब्ल्यूपी क्रमांक 5920/2007 के तहत एक रिट याचिका दायर की गई थी, जिसमें श्रम अधिकारियों



को 22.02.2006 के आदेश को लागू करने और अन्य सहायक राहत के लिए निर्देश जारी करने की मांग की गई थी।

14. दिनांक 18.01.2014 को उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी द्वारा सचिव, श्रम एवं रोजगार, भारत सरकार, नई दिल्ली के समक्ष न्यायालय के बाहर विवाद के निपटारे के लिए अभ्यावेदन दिया गया और दिनांक 19.02.2014 को सुनवाई हुई और उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी को सचिव, श्रम एवं रोजगार, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा उप मुख्य श्रम आयुक्त (सी) नई दिल्ली की उपस्थिति में सुना गया। उप मुख्य श्रम आयुक्त (सी) नई दिल्ली ने दिनांक 24.02.2014 को उप मुख्य श्रम आयुक्त (सी) जबलपुर को एक पत्र लिखा जिसमें मध्यस्थता अवार्ड अभी भी लागू होने योग्य होने और संबंधित प्रबंधन द्वारा अवार्ड को लागू नहीं करने की स्थिति में आवश्यक कार्रवाई करने का अनुरोध किया गया और मामले को प्राथमिकता के आधार पर निपटाने का अनुरोध किया गया चूंकि मामला उप मुख्य श्रम आयुक्त (सी) रायपुर के क्षेत्राधिकार में था उप मुख्य श्रम आयुक्त (सी) रायपुर द्वारा मामले को उचित कार्रवाई के लिए क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) बिलासपुर को भेजा गया। तत्पश्चात, उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-आर.सी.एम.सी और याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन के बीच क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) बिलासपुर की उपस्थिति में चर्चा हुई। चर्चा के दौरान, श्रमिकों ने जिनके नाम सूची में थे उन्होंने अपने सभी दस्तावेजों के साथ 13.10.2015 को क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) बिलासपुर के समक्ष पहचान के लिए अपनी उपस्थिति दर्ज कराई थी और क्षेत्रीय श्रम आयुक्त



(सी) बिलासपुर और याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन द्वारा उनकी पहचान की गई थी। इसके बाद, याचिकाकर्ता कंपनी की मांग के अनुसार, क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) बिलासपुर के समक्ष समर्थन शपथ पत्र और दस्तावेजी प्रमाण के साथ एक सूची व्यक्त की गई और उसके बाद दस्तावेजी प्रमाणों के साथ सूची क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (सी) बिलासपुर द्वारा याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन को 29.07.2016 को भेज दी गई। चर्चा के दौरान, याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन ने उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन आर.सी.एम.सी द्वारा व्यक्त सूची पर कभी विवाद नहीं किया और इसके अलावा दिनांक 29.07.2016 को आर.एल.सी बिलासपुर द्वारा भेजी गई सूची पर भी याचिकाकर्ता कंपनी के प्रबंधन द्वारा विवाद नहीं किया गया। दिनांक 19.10.2016 को भारत सरकार, कोयला मंत्रालय ने अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, एस.ई.सी.एल बिलासपुर को दिनांक 19.10.2016 को एक पत्र जारी कर कारण बताओ नोटिस जारी किया कि संदर्भ प्रकरण क्रमांक 06/89 के संबंध में भावे अवार्ड को क्यों लागू नहीं किया गया है जबकि प्रकरण क्रमांक 04/89 और 05/89 के संबंध में इसे लागू किया गया है। उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा याचिकाकर्ता कंपनी के महाप्रबंधक को 26.10.2016 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था कि एसईसीएल के प्रबंधन के खिलाफ कानूनी कार्रवाई क्यों न प्रारंभ की जाए।

15. उन्होंने आगे व्यक्त किया है कि चूंकि अपीलकर्ता कंपनी के खिलाफ कानूनी कार्रवाई प्रारंभ कर दी गई थी और याचिकाकर्ता की शिकायत का निवारण कर दिया गया था, इसलिए उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा एक आवेदन प्रस्तुत किया गया था।



यूनियन-आर.सी.एम.सी ने दिनांक 25.02.2017 को डब्ल्यूपी क्रमांक 5920/2007 को वापस लेने की अनुमति मांगी थी, साथ ही उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन की शिकायत का समाधान न होने पर माननीय न्यायालय में जाने की छूट मांगी थी। इसके बाद 08.03.2017 को डब्ल्यूपी क्रमांक 5920/2007 को वापस ले लिया गया था।

16. आगे यह तर्क दिया गया है कि 15.08.2018 को औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 33(सी)(1) के तहत उत्तरदाता क्रमांक 3- यूनियन-आर.सी.एम.सी द्वारा एक आवेदन प्रस्तुत किया गया था। उत्तरदाता क्रमांक 1 ने याचिकाकर्ता कंपनी के हसदेव क्षेत्र के महाप्रबंधक को दिनांक 20.09.2018 को कारण बताओ नोटिस जारी किया। याचिकाकर्ता कंपनी ने कारण बताओ नोटिस पर 04.12.2018 को अपना जवाब दाखिल किया और 20.12.2018 को उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन ने उत्तरदाता क्रमांक 1 के समक्ष लिखित तर्क व्यक्त किया, जिसने दिनांक 28.12.2018 के तर्कपूर्ण और योग्यता आदेश द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 33(सी)(1) के तहत उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन आर.सी.एम.सी द्वारा दायर आवेदन को स्वीकार कर लिया। इसके बाद उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा याचिकाकर्ता कंपनी को कारण बताओ नोटिस दिनांक 15.04.2019 और 22.08.2019 जारी किए गए, जिसका उनके द्वारा जवाब दिया गया। उत्तरदाता क्रमांक 1 ने याचिकाकर्ता कंपनी के खिलाफ राजस्व वसूली प्रमाण पत्र के साथ दिनांक 09.09.2019 को एक पत्र जारी किया और वर्तमान में, वसूली की कार्यवाही



तहसीलदार बिलासपुर (छग) के समक्ष लंबित है।

17. यह भी तर्क दिया गया है कि याचिकाकर्ता कंपनी ने हमेशा यह दलील देकर गुमराह किया है कि मध्यस्थता अवार्ड को उन श्रमिकों को रोजगार देकर पूरी तरह से लागू किया गया है जिनके नाम मध्यस्थ के समक्ष व्यक्त सूचियों में थे। यह भी तर्क दिया गया है कि उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन के सदस्य को कंपनी द्वारा शत्रुतापूर्ण भेदभाव का सामना करना पड़ता है। प्रबंधन के अनुसार उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन के सदस्य को छोड़कर अन्य यूनियन के सदस्यों को पहले ही नियमित किया जा चुका है।

18. इस न्यायालय द्वारा दिनांक 08.02.2024 को आदेश पारित किया, उपरोक्त आदेश निम्नानुसार है:-

‘सम्पूर्ण विवाद मध्यस्थता अवार्ड के इर्द-गिर्द घूमता है जिसे 05.10.1989 को मध्यस्थ श्री एचजी भावे के समक्ष भेजा गया था और उसके बाद 30 अक्टूबर 1989 को अवार्ड पारित किया गया था। अगस्त, 1990 को जारी किया गया था और इसे 07.09.1990 को केंद्र सरकार द्वारा सरकारी राजपत्र में प्रकाशित किया गया था। इस मामले में मुद्दा यह था कि क्या उत्तरदाता क्रमांक 3 ने अपने नियमितीकरण का दावा करते हुए श्रमिकों की सूची व्यक्त की थी, जैसा कि अन्य यूनियनों के सदस्यों को प्रदान किया गया है। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने व्यक्त किया कि उत्तरदाता क्रमांक 3 ने श्रमिकों की कोई सूची नहीं भेजी है, जैसा कि मध्यस्थ ने अपने अवार्ड में देखा है, यह तथ्यात्मक मैट्रिक्स है जिसे केवल एचजी भावे अवार्ड से संबंधित मूल रिकॉर्ड के आधार पर निर्धारित किया जा सकता है। इस प्रकार, उत्तरदाता क्रमांक 1 को अगली सुनवाई की



तारीख पर मध्यस्थता अवार्ड के पूर्ण आदेश पत्र के साथ मूल अभिलेख को बुलाने का निर्देश दिया जाता है।

19. दिनांक 01.03.2024 को भारत संघ के विद्वान डिप्टी एस.जी ने रिकॉर्ड पेश करने के लिए एक सप्ताह का समय मांगा है। तदनुसार, मामले को 13.03.2024 के लिए स्थगित कर दिया गया। 13.03.2024 को डिप्टी एस.जी ने कहा कि रिकॉर्ड विभाग के पास उपलब्ध नहीं है क्योंकि रिकॉर्ड 35 साल पुराना है, ऐसे में इसे पेश नहीं किया जा सकता है, इसलिए, इस अदालत ने भारत सरकार के श्रम और रोजगार मंत्रालय के सचिव को 08.04.2024 को या उससे पहले एक हलफनामा दायर करने का निर्देश दिया जिसमें यह बताया गया हो कि उनके पास रिकॉर्ड उपलब्ध हैं या नहीं। निर्देश के अनुसरण में, भारत सरकार के श्रम और रोजगार मंत्रालय के सचिव ने हलफनामा दायर किया है जिसमें कहा गया है कि चूंकि मामला बहुत पुराना एवं वर्ष 1990 से संबंधित है, चाहा गया अभिलेख मंत्रालय में नहीं पाया गया है।

20. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क किया कि उत्तरदाता क्रमांक 1/क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी), बिलासपुर यह विचार करने में विफल रहे कि उत्तरदाता क्रमांक 2/संघ द्वारा प्रतिनिधित्व किए गए श्रमिकों के पक्ष में कोई अवार्ड पारित नहीं किया गया था क्योंकि उनके नाम कभी भी मध्यस्थ के समक्ष न तो रखे गए और न ही उत्तरदाता क्रमांक 2/संघ द्वारा कोई सूची प्रस्तुत की गई थी। उन्होंने आगे व्यक्त किया कि उत्तरदाता क्रमांक 1/क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी), बिलासपुर यह विचार करने में विफल रहे कि उत्तरदाता क्रमांक 2/संघ द्वारा



प्रतिनिधित्व किए गए श्रमिकों के नाम पहली बार दर्ज किए गए थे। उत्तरदाता क्रमांक 1/क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आर.एल.सी), बिलासपुर यह विचार करने में विफल रहे कि उत्तरदाता क्रमांक 2/संघ द्वारा प्रतिनिधित्व किए गए श्रमिकों के पक्ष में कोई अवार्ड नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि रिट याचिका क्रमांक 5920/2007 में उत्तरदाता क्रमांक 1 से 4 ने माननीय उच्च न्यायालय के समक्ष व्यक्त किए हैं कि उत्तरदाता क्रमांक 2/यूनियन ने न तो मध्यस्थ के समक्ष ठेका श्रमिकों की कोई सूची प्रस्तुत की थी और न ही उत्तरदाता क्रमांक 2/यूनियन यह साबित कर पाया कि ठेका श्रमिकों ने कभी एस.ई.सी.एल के हसदेव क्षेत्र में टब रिपेयरर्स के कार्य/क्षमता में काम किया है और इसलिए उत्तरदाता प्राधिकारी यानी क्षेत्रीय श्रम आयुक्त (आरएलसी), बिलासपुर इसके विपरीत रुख नहीं अपना सकते। उन्होंने आगे कहा कि उत्तरदाता क्रमांक 2/यूनियन ने रिट याचिका क्रमांक 5920/2007 को बिना शर्त वापस ले लिया था, जो अवार्ड के कार्यान्वयन के लिए दायर की गई थी, इसलिए, मध्यस्थता अवार्ड के कार्यान्वयन के लिए दावाकृत अनुतोष पूर्व न्याय के सिद्धांत के आधार पर वर्जित है।

21. उन्होंने आगे कहा कि आई.डी. अधिनियम, 1947 की धारा 33-सी (1) किसी भी सबूत के अभाव में मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के तहत लागू नहीं होती है। आई.डी अधिनियम, 1947 की धारा 33-सी(2) के तहत बिना नियोक्ता से देय राशि उस प्रभाव का निर्धारण किए। वह आगे निवेदन किये हैं कि उत्तरदाता नंबर 1 को नियोक्ता से देय धन की वसूली करने के लिए अपना अधिकार क्षेत्र तभी प्राप्त होता है जब भुगतान के लिए देय राशि का निर्धारण श्रम न्यायालय द्वारा किया जाता



है। उत्तरदाता क्र. 1 ने अपने आदेश दिनांक 28.12.2018 में रिट याचिकाकर्ता-नियोक्ता को दावा की गई राशि की गणना और निर्धारण करने और संदर्भ केस क्रमांक 6/89 में भावे अवार्ड के अनुसार या दिनांक 22.9.1992 के समझौते के अनुसार देय धन का पता लगाने का निर्देश देकर घोर गलती की है। वह आगे व्यक्त किये हैं कि नियोक्ता दावा की गई राशि का निर्धारण करने और "देय धन" का पता लगाने में सक्षम नहीं है क्योंकि यह अधिकारिता केवल श्रम न्यायालय को है, केवल जब आईडी अधिनियम की धारा 33-सी(2) के तहत मजदूरी की गणना के लिए आवेदन प्रस्तुत किया जाता है। उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा इस बात पर विचार करने में विफल रहकर गंभीर त्रुटि की गई है कि औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33-सी की उप-धारा (3) के तहत "देय धन" की गणना करने के उद्देश्य से, केवल श्रम न्यायालय ही एक आयुक्त की नियुक्ति कर सकता है, जो आवश्यक साक्ष्य लेने के बाद श्रम न्यायालय को एक रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा, आयुक्त की रिपोर्ट और मामले की अन्य परिस्थितियों पर विचारोपरांत राशि का निर्धारण करेगा।

22. उन्होंने आगे व्यक्त किया है कि उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा पारित आदेश किसी भी परिस्थिति में उचित नहीं है, जिसमें नियोक्ता को रिकॉर्ड के उचित और सत्यापन और टब मरम्मत कार्य में लगे श्रमिकों की पहचान के बाद राशि की गणना और निर्धारण करने का निर्देश दिया गया है। ठेकेदारों के लिए श्रम न्यायालय से किसी अवार्ड या समझौते से देय कोई राशि प्राप्त करने के किसी पूर्व-विद्यमान अधिकार के अभाव में, उत्तरदाता क्रमांक 1, अर्थात् उपयुक्त सरकार, आईडी अधिनियम की धारा



33-सी(1) के तहत कोई क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं करती है। वह आगे व्यक्त किए हैं कि आई.डी अधिनियम, 1947 की धारा 10 ए(3) के तहत नियोक्ता और एन.सी.डब्ल्यू.एफ संघ के उपाध्यक्ष के बीच दिनांक 23.9.1989 को हुए समझौते में 135 व्यक्तियों की सूची नहीं है और यदि ऐसी कोई सूची उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा विलंबित चरण में तैयार की गई है, तो वह निर्मित, मनगढ़ंत है और दिनांक 23.9.1989 के समझौते की तारीख से लगभग 25 वर्षों के बाद पहली बार अनुचित लाभ प्राप्त करने के लिए पेश की गई है। इस संदर्भ में विद्वान मध्यस्थ श्री एच.जी भावे द्वारा दिनांक 30.8.1990 को पारित अवार्ड 1989 के क्रमांक 6 ने अपने अवार्ड में संदर्भ क्रमांक 3/89 (एक्सटेंशन डब्ल्यू-7 देखें) के अनुसार 175 श्रमिकों की सूची का मूल्यांकन किया है। इसके अलावा अवार्ड के पेज 35 पर 26 श्रमिकों (एक्सटेंशन डब्ल्यू-8) की सूची है।

23. विद्वान मध्यस्थ श्री भावे ने इसके पश्चात अवधारित किया कि एस.के.एम.एस (एआईटीयूसी) ने संदर्भ क्रमांक 5/89 और एन.सी.डब्ल्यू.एफ ने संदर्भ क्रमांक 6/89 में मध्यस्थ के समक्ष ऐसी कोई सूची दाखिल नहीं की है और इसलिए, 135 व्यक्तियों की तथाकथित सूची, जो कथित तौर पर 20.9.1989 की है, गलत है और अनुचित लाभ उठाने के लिए तैयार की गई है । इस प्रकार आदेश दिनांक 28.12.2018, कारण बताओ नोटिस 15.04.2019, 22.08.2019 को निरस्त किए जाने योग्य है। उनके द्वारा तर्कों के समर्थन में माननीय उच्चतम न्यायालय के ए.आई.आर 1963 एस.सी 487 पंजाब नेशनल बैंक बनाम. केएल खरबंदा,



एआईआर 1964 एससी 743, सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया बनाम पी.एस राजगोपालन, 1997 (3) एससीसी 150, फैब्रिल गैसोसा एवं अन्य बनाम श्रम आयुक्त व अन्य, सीमेंस लिमिटेड बनाम महाराष्ट्र राज्य 2006(12) एससीसी 33 "ओरिक्स फिशरीज प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ 2010(13) एससीसी 427, 2022 (5) एससीसी बॉम्बे केमिकल इंडस्ट्रीज बनाम उप श्रम आयुक्त और अन्य, 2007(5) एससीसी 281 हैंडार्ड (वक्फ) प्रयोगशालाएँ बनाम उप श्रम आयुक्त, 2005(8) एससीसी 58 उत्तर प्रदेश राज्य बनाम बृजपाल सिंह, 1995(1) एससीसी 235 दिल्ली नगर निगम बनाम गणेश रजक, 2004(1) एससीसी 68 पांडिचारी खादी VIII इंडस्ट्रीज बनाम पी. कुलथ, 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 852 ओडिशा राज्य बनाम लक्ष्मी नारायण और डब्ल्यूपीएस नंबर 2023 का निर्णय 22.02.2023 को तुलसी रामद्रो बनाम छत्तीसगढ़ राज्य का अवलंब लिया गया है।

24. श्री रमाकांत मिश्रा, उप महाधिवक्ता, भारत संघ ने भारत संघ की ओर से दाखिल जवाब में व्यक्त तथ्यों को दोहराते हुए व्यक्त किए हैं कि 23.09.1989 को औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10-ए "विवादों को स्वैच्छिक मध्यस्थता के लिए संदर्भित करना" के तहत एसईसीएल प्रबंधन और यूनियन आर.सी.एम.सी (पूर्ववर्ती राष्ट्रीय कॉलरी श्रमिक महासंघ) के बीच अनुबंधित श्रमिकों के नियमितीकरण के संबंध में औद्योगिक विवाद को मध्यस्थता के माध्यम से मध्यस्थ के पास प्रेषित किए जाने हेतु एक समझौता किया गया था। श्री एचजी भावे को सरकार द्वारा मध्यस्थ नियुक्त किया गया था। उक्त समझौता और संदर्भ की शर्तें भी



05.10.1989 को प्रकाशित की गई थीं, जिसमें स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि प्रभावित उपक्रम में कार्यरत कुल श्रमिकों की संख्या 135 थी और प्रभावित श्रमिकों की अनुमानित संख्या 135 है। उपरोक्त समझौता न तो निरस्त किया गया है और न ही याचिकाकर्ता द्वारा चुनौती दी गई है। तदनुसार, मध्यस्थ श्री एचजी भावे द्वारा एस.ई.सी.एल प्रबंधन और यूनियन आर.सी .एम.सी (पूर्ववर्ती राष्ट्रीय कॉलरी श्रमिक महासंघ) के बीच निष्पादित समझौते के अनुसार मध्यस्थता संदर्भ प्रकरण क्रमांक 06/89 में 30.08.1990 को अवार्ड पारित कर ट्यूब रिपेयर वर्कर्स को 01.12.1988 से सभी परिणामी लाभों के साथ विभागीयकरण करने का निर्देश दिया गया था। उक्त भावे अवार्ड को औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 17 के अनुसार 07.09.1990 को राजपत्र अधिसूचना में प्रकाशित किया गया था ।

25. उन्होंने आगे व्यक्त किया है कि 23.09.1989 के समझौते और उसके बाद के परिणामी अवार्ड को न तो चुनौती दी गई और न ही निरस्त किया गया और इसके प्रकाशन के तीस दिन बाद अंतिम रूप प्राप्त हुआ इसलिए याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत याचिका, जिसमें उत्तरदाता क्रमांक 01 द्वारा जारी किए गए कारण बताओ नोटिस 15.04.2019 और 22.08.2019 को रद्द करने के साथ-साथ 09.09.2019 के वसूली प्रमाणपत्र और 28.12.2018 के निर्देशों सहित बाद की कार्यवाही को खारिज किया जाना चाहिए क्योंकि यह गुण-दोष से रहित है। उन्होंने आगे कहा कि 135 कामगारों की पहचान कभी भी विवाद का विषय नहीं थी और इसलिए, याचिकाकर्ता द्वारा उक्त अवार्ड के कार्यान्वयन को इस स्तर पर विवादित नहीं किया जा सकता है ।



वास्तव में, प्रबंधन यह साबित करने में विफल रहा है कि उन्होंने मध्यस्थता संदर्भ मामले क्रमांक 06/89 में मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान कामगारों की सूची के बारे में कोई आपत्ति भी उठाई थी। इस प्रकार, याचिकाकर्ता आईडी अधिनियम की धारा 33 सी (1) के तहत वसूली का प्रमाण पत्र जारी करते समय वैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन या किसी भी प्रक्रियात्मक चूक को साबित करने में पूरी तरह विफल रहा है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का कोई उल्लंघन नहीं है। वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता द्वारा प्रदर्शित किया गया। एक बार प्रकाशित होने के बाद आर्वाड को आई.डी अधिनियम की धारा 17 के तहत किसी भी न्यायालय द्वारा प्रश्नगत नहीं किया जा सकता। ऐसी परिस्थिति में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत माननीय न्यायालय द्वारा विचार किए जाने योग्य मामला नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि प्रकरण के तथ्य एवं परिस्थितियों को देखते हुए प्रकरण में पूर्व न्याय का सिद्धांत लागू नहीं होता है। रिट याचिका को व्यय सहित खारिज करने का अनुरोध करते हैं।

26. उत्तरदाता क्रमांक 3 की ओर से श्री प्रफुल्ल एन. भरत, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ऋषि राहुल सोनी अधिवक्ता और श्री संजय पटेल अधिवक्ता ने जबाव में व्यक्त तथ्यों को दोहराते हुए व्यक्त किए हैं कि याचिकाकर्ता कंपनी या महाप्रबंधक हसदेव क्षेत्र ने तत्काल रिट याचिका दायर की है, जिसमें उत्तरदाता क्रमांक 1- क्षेत्रीय श्रम आयुक्त बिलासपुर (छग) द्वारा जारी कारण बताओ नोटिस दिनांक 15.04.2019, 22.08.2019 को चुनौती दी गई है, जो रिट याचिका दायर करने के लिए अधिकृत व्यक्ति नहीं है, इसलिए ऐसी रिट याचिका पोषणीय नहीं है। उन्होंने आगे व्यक्त किया



कि कंपनी के निदेशक मंडल द्वारा महाप्रबंधक हसदेव क्षेत्र को अधिकृत करने के लिए कोई प्राधिकरण दायर नहीं किया गया है, इसलिए रिट याचिका एक अनधिकृत व्यक्ति द्वारा दायर की गई है, इसलिए रिट याचिका पोषणीय नहीं है। तर्कों के समर्थन में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णित स्टेट बैंक ऑफ त्रावणकोर बनाम किंग्स्टन कंप्यूटर्स प्राइवेट लिमिटेड (2011) 11 एससीसी 524 का अवलंब लिया गया है।

27. उन्होंने आगे व्यक्त किया है कि संदर्भ केस क्रमांक 06/89 में पारित मध्यस्थता अवार्ड का याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा अनुपालन नहीं किया गया है। वास्तव में, याचिकाकर्ता कंपनी ने जानबूझकर न्यायालय को गुमराह करने का प्रयास किया है। माननीय न्यायालय में संदर्भ केस क्रमांक 3/89 और 4/89 में पारित अवार्ड का अनुपालन होना बताया गया है जबकि संदर्भ केस क्रमांक 6/89 से उत्पन्न वर्तमान मामले के साथ इसका कोई संबंध नहीं है। जहां तक श्रमिकों की सूची जमा न करने के संबंध में याचिकाकर्ता कंपनी द्वारा उठाए गए बिंदु का संबंध है। यहां यह उल्लेख करना अनुचित नहीं होगा कि याचिकाकर्ता कंपनी ने आज तक मध्यस्थ या किसी अन्य प्राधिकारी के समक्ष कभी भी उपर्युक्त रजिस्टर (वैधानिक रिकॉर्ड) पेश नहीं किए हैं। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता कंपनी ने मध्यस्थ श्री एच.जी भावे द्वारा संदर्भ क्रमांक 06/89 में पारित अवार्ड को लागू नहीं किया है और अन्यथा की स्थिति में याचिकाकर्ता कंपनी संदर्भ क्रमांक 06/89 में पारित मध्यस्थता अवार्ड के कार्यान्वयन के परिणाम/परिणाम को प्रमाणित करने के लिए दस्तावेज पेश करने की स्थिति में होती।



28. उन्होंने आगे व्यक्त किया है कि भावे अवार्ड का पालन न करने के मामले की जांच न केवल श्रम एवं रोजगार मंत्रालय द्वारा की गई है, बल्कि कोयला मंत्रालय द्वारा भी की गई है और जांच के बाद पाया गया कि संदर्भ क्रमांक 6/89 में पारित मध्यस्थता अवार्ड को लागू नहीं किया गया है और इसके बाद याचिकाकर्ता कंपनी के खिलाफ औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 33(सी)(1) के तहत कार्यवाही की गई है।

29. यह भी व्यक्त किया गया है कि जहां तक WP क्रमांक 5920/2007 को वापस लेने का प्रश्न है, इससे याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं होता है। रिट याचिका WP क्रमांक 5920/2007 उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन-RCMC द्वारा मूलतः केंद्रीय श्रम प्राधिकरणों को 22.02.2006 के आदेश को लागू करने का निर्देश देने के लिए दायर की गई थी, लेकिन बाद में जब याचिका के खिलाफ कानूनी कार्यवाई शुरू की गई। कंपनी और उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन की शिकायत का निवारण कर दिया गया था, उत्तरदाता क्रमांक 3 यूनियन आर.सी.एम.सी ने शिकायत का पुनः निवारण नहीं होने पर माननीय न्यायालय का दरवाजा खटखटाने की स्वतंत्रता के साथ रिट याचिका वापस लेने के लिए एक आवेदन दायर किया और 08.03.2017 को WP क्रमांक 5920/2007 को वापस ले लिया गया था। उपरोक्त स्थिति को देखते हुए, WP क्रमांक 5920/2007 की वापसी याचिकाकर्ता कंपनी के पक्ष में किसी भी अधिकार का निर्माण नहीं करती है, क्योंकि उक्त रिट याचिका नई विकसित स्थिति यानी एसईसीएल के प्रबंधन के खिलाफ अभियोजन के



लिए नोटिस जारी करने के कारण वापस ले ली गई थी। अन्यथा भी, चूंकि उक्त रिट याचिका का गुण-दोष के आधार पर निर्णय नहीं हुआ है, इसलिए WP क्रमांक 5920 में माननीय उच्च न्यायालय मध्य प्रदेश द्वारा पारित आदेश दिनांक 08.03.2017 पर पूर्व न्याय का सिद्धांत लागू नहीं होता है। तर्कों के समर्थन में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णित **सरगुजा परिवहन सेवा बनाम राज्य परिवहन अपीलीय न्यायाधिकरण, मध्य प्रदेश, ग्वालियर एवं अन्य 1987(1) एससीसी 5** का अवलंब लेते हुए याचिका को निरस्त किए जाने का अनुरोध किया गया है।

30. मैंने उभयपक्ष के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना एवं अभिलेख का अवलोकन किया।

31. उपर्युक्त तथ्यात्मक स्थिति से, इस न्यायालय के समक्ष निम्न विचारणीय प्रश्न उत्पन्न होते हैं :-

- (I) क्या उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा उठाई गई आपत्ति के आधार पर रिट याचिका पोषणीय नहीं है?
- (II) क्या डब्ल्यू.पी.एल क्रमांक 5920/2007 के वापस लेने के कारण याचिकाकर्ता पर उत्तरदाता क्रमांक 1 के समक्ष दावा करने पर अवरोध उत्पन्न हो जाता है?
- (III) क्या उत्तरदाता क्रमांक 1 के समक्ष औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33(सी)(1) के तहत प्रस्तुत आवेदन पोषणीय है या नहीं ?



### बिन्दु नं.1.

32. उत्तरदाता क्रमांक 3 की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा व्यक्त किया गया कि रिट याचिका साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड के महाप्रबंधक, एसईसीएल, हसदेव क्षेत्र के माध्यम से दायर की गई है और शपथ पत्र श्री आरआरआर लकड़ा वरिष्ठ प्रबंधक, कार्मिक, एसईसीएल, हसदेव क्षेत्र द्वारा प्रस्तुत किया गया है, लेकिन श्री आर.आर.आर लकड़ा को शपथ पत्र दायर करने के लिए अधिकृत करने वाला कोई प्राधिकार प्रस्तुत नहीं किया गया है और वकालतनामा पर एस.ई.सी.एल के महाप्रबंधक द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं, इसलिए, रिट याचिका को अनधिकृत व्यक्ति द्वारा सत्यापित किया गया है, इसलिए रिट याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

अपने तर्क को पुष्ट करने के लिए, उन्होंने **स्टेट बैंक (सुप्रा)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार माना है: -

14. हमारे विचार में, चुनौती के तहत निर्णय को रद्द किया जाना चाहिए क्योंकि उत्तरदाता ने यह साबित करने के लिए कोई सबूत पेश नहीं किया कि श्री अशोक के. शुक्ला को कंपनी के निदेशक के रूप में नियुक्त किया गया था और कंपनी के निदेशक मंडल द्वारा अपीलकर्ता के खिलाफ मुकदमा दायर करने के लिए एक प्रस्ताव पारित किया गया था और श्री अशोक के. शुक्ला को ऐसा करने के लिए अधिकृत किया गया था। श्री राज के. शुक्ला द्वारा जारी किया गया प्राधिकरण पत्र, जिन्होंने



खुद को कंपनी का मुख्य कार्यकारी अधिकारी बताया था, कागज के टुकड़े के अलावा कुछ नहीं था क्योंकि निदेशक मंडल द्वारा श्री राज के. शुक्ला को कंपनी की ओर से मुकदमा दायर करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को अधिकृत करने के लिए अपनी शक्तियों को सौंपने वाला कोई प्रस्ताव पारित नहीं किया गया था।

33. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा इस दलील पर कड़ी आपत्ति की गई और कहा गया कि रिट याचिका पूरी तरह से स्वीकार्य है, क्योंकि एस.ई.सी.एल कंपनी अधिनियम 1956 या कंपनी अधिनियम 2013 के तहत पंजीकृत कंपनी है। सी.पी.सी के आदेश 29 नियम 1 में प्रावधान है कि निगम द्वारा या उसके विरुद्ध दायर मुकदमे में निगम की ओर से सचिव या निगम के किसी निदेशक या अन्य प्रधान अधिकारी द्वारा, जो मामले के तथ्यों का निपटारा करने में सक्षम हो, किसी दलील पर हस्ताक्षर और सत्यापन किया जा सकता है। हलफनामा श्री आरआरआर लकड़ा, वरिष्ठ प्रबंधक कार्मिक द्वारा दायर किया गया है, जिन्होंने अपने हलफनामे में स्पष्ट रूप से कहा है कि उन्हें एस.ई.सी.एल द्वारा शपथ लेने और हलफनामा निष्पादित करने के लिए अधिकृत किया गया है। इस तथ्य का उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा खंडन नहीं किया गया है या यह प्रदर्शित करने के लिए कोई सामग्री रिकॉर्ड पर नहीं रखी गई है कि श्री आरआरआर लकड़ा एसईसीएल द्वारा अधिकृत नहीं हैं। यहां तक कि श्री आरआरआर लकड़ा, वरिष्ठ कार्मिक प्रबंधक, जो कंपनी में कार्यरत श्रमिकों के मामलों को देखते हैं, महाप्रबंधक या निदेशक के रूप में काम करने वाले व्यक्ति की तुलना में



मामले के भौतिक तथ्यों से अच्छी तरह वाकिफ हैं, ऐसे में उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा उठाई गई आपत्ति खारिज किए जाने योग्य वैसे भी, यह कानून की अच्छी तरह से स्थापित कानूनी स्थिति है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिका एक मुकदमे से अलग है, इसलिए, सी.पी.सी 1908 के प्रावधानों का कोई अनुप्रयोग नहीं है, जबकि उच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत असाधारण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया, जिसका उद्देश्य उस व्यक्ति को बहुत तेज़ और प्रभावी उपाय प्रदान करना था, जिसके कानूनी और संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन किया गया है। यदि संहिता में निर्धारित सभी विस्तृत और तकनीकी नियमों को रिट कार्यवाही पर लागू किया जाता है, तो इसका उद्देश्य विफल होने की संभावना है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **पूरन सिंह और अन्य बनाम पंजाब राज्य के मामले में 1996 (2) एससीसी 205** में सी.पी.सी के कठोर अनुपालन के विषय पर इस प्रकरण में विचार कर पैराग्राफ 5 और 10 में निम्नानुसार अवधारित किया गया है: -

5. जिस प्रश्न से हम चिंतित हैं वह यह है कि क्या संहिता के आदेश 22 के तहत किए गए उपरोक्त प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत कार्यवाही पर लागू होते हैं। सिविल प्रक्रिया संहिता (संशोधन) अधिनियम 1976 द्वारा स्पष्टीकरण पेश किए जाने से पहले, संहिता की धारा 141 इस प्रकार थी :

"141. विविध कार्यवाहियाँ – वादों के संबंध में इस संहिता में प्रदान



की गई प्रक्रिया का, जहां तक इसे लागू किया जा सकता है, किसी भी सिविल अधिकारिता वाले न्यायालय में सभी कार्यवाहियों में अनुसरण किया जाएगा।"

उपरोक्त संशोधन अधिनियम द्वारा जो स्पष्टीकरण जोड़ा गया, उसमें कहा गया:

स्पष्टीकरण – इस खंड में, "कार्यवाही" शब्द का प्रयोग

इसमें आदेश IX के तहत कार्यवाही शामिल है, लेकिन संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कोई कार्यवाही शामिल नहीं है।"

विभिन्न न्यायालयों के बीच इस बात पर विवाद था कि क्या संहिता के

विभिन्न प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत रिट

कार्यवाही पर भी लागू होंगे। कुछ उच्च न्यायालयों ने माना कि उच्च

न्यायालय के समक्ष रिट कार्यवाही संहिता की धारा 141 के अर्थ में

"किसी भी सिविल अधिकार क्षेत्र की अदालत में" कार्यवाही मानी

जाएगी। (इब्राहिमभाई बनाम राज्य, एआईआर 1968 गुजरात

202; पंचायत अधिकारी बनाम जैन नारायण, एआईआर 1967

ऑल। 334; कृष्णलाल साधु बनाम राज्य, एआईआर 1967 कैल।

275; सोना राम रंगा राम बनाम केंद्र सरकार, एआईआर 1963 पंजाब

510; ए.आदिनारायण बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, एआईआर 1958 आंध्र

प्रदेश 16)। हालाँकि, दूसरे मामलों में यह माना गया कि रिट कार्यवाही





एक विशेष प्रकृति की कार्यवाही है और यह सिविल अधिकार क्षेत्र वाली अदालत में नहीं है, इसलिए संहिता की धारा 141 लागू नहीं होती। (भगवान सिंह बनाम अतिरिक्त निदेशक चकबंदी, एआईआर 1968 पंजाब 360; चांदमल बनाम राज्य, एआईआर 1968 राजस्थान 20; केबी मैनुफैक्चरिंग कंपनी बनाम बिक्री कर आयुक्त, एआईआर 1965 अखिल 517; रामचंद बनाम आनंदलाल, एआईआर 1962 गुजरात 21; मेसर्स भारत बोर्ड मिल्स बनाम क्षेत्रीय निधि आयुक्त एवं अन्य, एआईआर 1957 कलकत्ता 702

10. सरल भाषा में कहें तो संहिता की धारा 141 में यह प्रावधान है कि मुकदमों के संबंध में उक्त संहिता में दी गई प्रक्रिया का पालन "जहां तक इसे लागू किया जा सकता है, सभी कार्यवाहियों में" किया जाएगा। दूसरे शब्दों में, यह स्वतंत्र है कि वह इस संहिता में दी गई प्रक्रिया के अनुसार मुकदमों के संबंध में कार्यवाही करे। उक्त संहिता में वादों के संबंध में दी गई प्रक्रिया किसी भी सिविल अधिकार क्षेत्र के न्यायालय में किसी अन्य कार्यवाही पर लागू होती है। जो स्पष्टीकरण जोड़ा गया है वह कमोबेश परंतुक की प्रकृति का है, जिसमें कहा गया है कि अभिव्यक्ति "कार्यवाही" में संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कोई कार्यवाही शामिल नहीं होगी। इसका आवश्यक परिणाम यह होगा कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कार्यवाही को छोड़कर सिविल





अधिकार क्षेत्र के किसी भी न्यायालय में किसी भी कार्यवाही के लिए संहिता में प्रदान की गई प्रक्रिया को लागू करना होगा। एक बार संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कार्यवाही को अभिव्यक्ति से बाहर कर दिया गया है। इस स्पष्टीकरण के द्वारा संहिता की धारा 141 में होने वाली "कार्यवाहियों" के बारे में यह स्पष्ट किया जाता है कि संहिता की धारा 141 के आधार पर संहिता में दी गई कोई भी प्रक्रिया संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत कार्यवाही पर कैसे लागू की जा सकती है? इस पृष्ठभूमि में, केवल रिट नियम 32 के आधार पर संहिता के प्रावधान रिट कार्यवाहियों पर कैसे लागू होंगे? इसके अलावा, संहिता की धारा 141 अन्य कार्यवाहियों के संबंध में भी यह विचार करती है कि मुकदमों के संबंध में संहिता में दी गई प्रक्रिया का "जहां तक इसे लागू किया जा सकता है" पालन किया जाएगा। रिट नियमों का नियम 32 संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत याचिकाओं पर संहिता के प्रावधानों को विशिष्ट रूप से लागू नहीं करता है। यह केवल यह कहता है कि जिन मामलों के लिए उन नियमों द्वारा कोई प्रावधान नहीं किया गया है, संहिता के प्रावधान यथावश्यक परिवर्तनों सहित लागू होंगे, जहां तक वे उन नियमों से असंगत नहीं हैं।

**रोकयबी बनाम इस्माइल खान, एआईआर 1984 कर्नाटक 234** के मामले में, कर्नाटक उच्च न्यायालय द्वारा तैयार रिट कार्यवाही नियमों के





नियम 39 के मद्देनजर, सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों को रिट कार्यवाही और रिट अपील पर लागू किया गया था, यह माना गया था कि संहिता के प्रावधान रिट कार्यवाही और रिट अपील पर लागू थे।

34. उत्तरदाता क्रमांक 3 की ओर से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा संदर्भित बैंक के प्रकरण का निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता है, क्योंकि उस मामले में विवाद सिविल वाद में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा अपने मूल क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए पारित आदेश से उत्पन्न हुआ था, जहां सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान कठोरता से लागू होते हैं, ऐसे में उपरोक्त तथ्यात्मक स्थिति और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पूरन सिंह (सुप्रा) के मामले में निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए, उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा रिट याचिका की पोषणीयता के संबंध उठाई गई आपत्ति को अस्वीकार किया जाना चाहिए। तदनुसार, इसे अस्वीकार किया जाता है। इस प्रकार, बिंदु क्रमांक 1 का उत्तर याचिकाकर्ता के पक्ष में एवं उत्तरदाता क्रमांक 3 के विरुद्ध दिया जाता है।

### बिन्दु सं. 2.

35. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा व्यक्त किया गया कि उत्तरदाता क्रमांक 3 संघ द्वारा प्रस्तुत डब्लूपीएल क्रमांक 5920/2007 को न्यायालय की अनुमति एवं किसी शर्त के बिना वापस ले लिया गया है, इसलिए उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा उत्तरदाता क्रमांक 1 के समक्ष प्रस्तुत पश्चातवर्ती कार्यवाही पूर्व न्याय के सिद्धांत से वर्जित है और यह भी व्यक्त किया गया कि पश्चातवर्ती कार्यवाही एवं आदेश पूर्व



न्याय सिद्धांत के आधार पर अपास्त किए जाने योग्य है। याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा तर्कों के समर्थन में **माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्णित उड़ीसा राज्य व अन्य बनाम लक्ष्मी नारायण दास (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि 2023 एससीसी में ऑन लाइन 825 के पैराग्राफ 37 का अवलंब लिया गया है, जो निम्नानुसार है:-**

36. 37. यह प्रश्न है कि क्या न्यायालय की अनुमति के बिना वाद वापस लिए जाने के पश्चात उसी अनुतोष के लिए इस न्यायालय में प्रस्तुत रिट याचिका पोषणीय होगी, उक्त संबंध में एमजे एक्सपोर्ट्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत संघ और अन्य (2021) 13 एससीसी 543 में मार्गदर्शन प्राप्त होता है जिसमें आन्वयिक पूर्व न्याय के सिद्धांत को लागू किया गया। उक्त प्रकरण से संबंधित याचिकाकर्ता ने न्यायालय की अनुमति के बिना पूर्व में प्रस्तुत याचिका को वापस ले लिया और समान अनुतोष के लिए नई याचिका प्रस्तुत की। न्यायालय द्वारा प्रतिपादित किया गया कि आदेश 23, नियम 1 सी पी सी में उपबंधित सिद्धांत रिट कार्यवाही में भी लागू होता है। जिसका पैरा 15 नीचे उद्धृत किया जा रहा है:-

"15. उपरोक्त परिस्थितियों में, हम महसूस करते हैं कि जब यह विषय उठाया गया था और पहली रिट याचिका में छोड़ दिया





गया, जो वापस लिए जाने के आधार पर निरस्त की गई थी, आन्वयिक पूर्व न्याय का सिद्धांत सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 23, नियम 1 में उपबंधित किया गया है, उक्त सिद्धांत को रिट कार्यवाही के संबंध में विस्तारित किया जा सकता है जैसा कि **सरगुजा परिवहन सेवा बनाम एसटीएटी**, (1987) 1 एससीसी 5 में धारित किया गया है।"

37. उत्तरदाता क्रमांक 3 के वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा गंभीर आपत्ति व्यक्त करते हुए कहा गया कि उनके द्वारा प्रारंभ की गई पश्चातवर्ती कार्यवाही पूर्व न्याय के सिद्धांत से बाधित नहीं होती है, जैसा कि माननीय मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा विविध याचिका क्रमांक 1332/1994 निर्णय दिनांक 10.11.2005 में उत्तरदाता क्रमांक 1 को उत्तरदाता क्रमांक 3 के अभ्यावेदन पर पुनर्विचार हेतु निर्देशित किया गया था उक्त आदेश को प्रश्नगत नहीं किए जाने से अंतिम हो चुका है। यहां तक कि डब्लूपीएल क्रमांक 5920/2007 को बिना शर्त वापस लेने से भी उत्तरदाता क्रमांक 1 के लिए माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का पालन करने में कोई बाधा नहीं आती है और यह भी व्यक्त किया गया कि याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति को खारिज किया जाना चाहिए।

38. अभी हाल में ही माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष पूर्व न्याय के सिद्धांत दिल्ली सरकार एवं अन्य बनाम मेसर्स बीएसके रियल टोर एलएलपी एवं अन्य मामले में एसएलपी (सी) डी. क्रमांक 32072/2022 एवं अन्य संबंधित एसएलपी (सी) में



**17** मई, 2024 में विचारार्थ उत्पन्न हुआ था, सर्वोच्च न्यायालय के तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ द्वारा निम्नानुसार प्रतिपादित किया गया :-

21. लगभग एक शताब्दी पहले, मुन्नी बीबी (मृत) और अन्य बनाम तिरलोकी नाथ और अन्य एआईआर 1931 पीसी 114 में प्रिवी काउंसिल के तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ ने सह-प्रतिवादियों के मध्य पूर्व न्याय का सिद्धांत लागू होने के लिए निम्नलिखित तीन शर्तें प्रतिपादित की गई :

"(1.) संबंधित प्रतिवादियों के बीच हितों का टकराव होना चाहिए; (2.) वादी को उसके द्वारा दावा की गई राहत देने के लिए इस टकराव का निर्णय करना आवश्यक होना चाहिए; और (3.) प्रतिवादियों के बीच का प्रश्न अंतिम रूप से निर्णित किया गया हो।"

22. गुजरात राज्य और अन्य बनाम एमपी शाह चैरिटेबल ट्रस्ट और अन्य (1994) 3 एससीसी 552 में, दो माननीय न्यायाधीशों वाली खंडपीठ द्वारा निर्णित किया गया कि पूर्व न्याय का सिद्धांत केवल तभी लागू होता है जब पक्षकारों के मध्य प्रत्यक्षतः एवं सारतः विवाद प्रश्न विद्यमान हो जिसे न्यायालय द्वारा सुनवाई उपरांत अंतिम रूप से निराकृत किया गया हो । निर्णय का प्रासंगिक अंश निम्नानुसार है:





"17. [...] सह-प्रतिवादियों के बीच पूर्व न्याय के सिद्धांत को लागू करने के लिए – सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में वर्णित शर्तों के अनुसार, उक्त प्रावधान निश्चित रूप से रिट याचिका की कार्यवाही में लागू नहीं है – यह आवश्यक है कि उनके बीच सीधे और काफी हद तक विवाद में कोई मुद्दा हो, जिसे न्यायालय ने सुनवाई कर अंतिम रूप से निर्णित किया हो। वही स्थिति होगी, जहाँ पूर्व न्याय के सामान्य सिद्धांत पर रिट याचिका में सह-प्रतिवादियों के बीच पूर्व न्याय की दलील उठाई गई है। चूँकि उक्त बुनियादी आवश्यकता पूरी नहीं हुई है, इसलिए उक्त निर्णय को ट्रस्ट और सरकार के बीच पूर्व न्याय नहीं माना जा सकता है।

23. हमारे समक्ष मुख्य मामले में या अन्य अपीलों में, उच्च न्यायालय के समक्ष सह-उत्तरदाता, अर्थात् जीएनसीटीडी और डीडीए के हित परस्पर विरोधी नहीं थे। उनके बीच, न तो कोई विवादित मुद्दा था, न ही उच्च न्यायालय ऐसे किसी मुद्दे पर निर्णय दे सकता था। इस न्यायालय के समक्ष भी, पहले दौर में, ऐसा कोई मुद्दा नहीं था जिस पर जीएनसीटीडी और डीडीए के बीच मतभेद हो। इसके प्रकाश में, उपर्युक्त कानूनी सिद्धांत के अनुसार, पूर्व न्याय के सिद्धांत की प्रयोज्यता को अस्वीकार





किया जाता है।

24. मथुरा प्रसाद बाजू जायसवाल एवं अन्य बनाम दोसीबाई एनबी जीजीभॉय (1970) एससीसी 613 के निर्णय में संक्षिप्त समीक्षा में पूर्व न्याय के सिद्धांत की प्रयोज्यता पर दूसरे मुद्दे के समाधान के लिए भी मार्गदर्शन करेगा। उक्त निर्णय में, प्रथम दृष्टया न्यायालय और उच्च न्यायालय ने मानक किराया तय करने की मांग करने वाले आवेदन को खारिज कर दिया, यह मानते हुए कि किराया अधिनियम के प्रावधान खुली भूमि पर लागू नहीं होते, पहले के एक निर्णय पर भरोसा करते हुए। हालांकि, बाद में इस न्यायालय ने उक्त निर्णय को पलट दिया, और खुली भूमि पर भी किराया अधिनियम की प्रयोज्यता की पुष्टि की। जब ए ने एक नया आवेदन दायर किया, तो बी ने इसका विरोध किया, यह दावा करते हुए कि यह पूर्व न्याय द्वारा वर्जित है। इस तर्क को खारिज करते हुए और आवेदन की व्यवहार्यता की पुष्टि करते हुए, इस न्यायालय के तीन माननीय न्यायाधीशों की पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी की:

5. लेकिन पूर्व न्याय का सिद्धांत प्रक्रिया के क्षेत्र से संबंधित है: इसे पक्षों के बीच विधायी निर्देश के दर्जे तक नहीं बढ़ाया जा सकता है ताकि न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को प्रभावित करने





वाले अधिनियम की व्याख्या से संबंधित प्रश्न का निर्धारण उनके बीच अंतिम रूप से किया जा सके, भले ही तथ्य का कोई प्रश्न या कानून और तथ्य का मिश्रित प्रश्न और पक्षों के बीच विवादित अधिकार से संबंधित कोई प्रश्न इसके द्वारा निर्धारित न किया गया हो। किसी विवादग्रस्त मामले पर सक्षम न्यायालय का निर्णय उन्हीं पक्षों के बीच किसी अन्य कार्यवाही में पूर्व न्याय हो सकता है: 'विवादग्रस्त मामला' तथ्य का प्रश्न, विधि का प्रश्न या तथ्य एवं विधि का मिश्रित प्रश्न हो सकता है। किसी सक्षम न्यायालय द्वारा अवधारित किया गया तथ्य का प्रश्न या तथ्य एवं विधि का मिश्रित प्रश्न, पक्षकारों के मध्य अंतिम रूप से अवधारित किया गया और किसी अन्य कार्यवाही में उनके बीच फिर से नहीं उठाया जा सकता है। केवल विवादग्रस्त मामले पर पूर्व निर्णय पूर्व न्याय है: निर्णय के कारण पूर्व न्याय नहीं हैं। पक्षों के बीच विवाद का विषय एक पक्ष द्वारा दावा किया गया अधिकार है और दूसरे पक्ष द्वारा अस्वीकार किया गया है, और अधिकार का दावा अपने स्वभाव से ही तथ्यों के प्रमाण और उस पर प्रासंगिक कानून के आवेदन पर निर्भर करता है। तथ्यों से असंबंधित कानून का एक शुद्ध प्रश्न जो अधिकार को जन्म देता है, उसे विवाद का विषय नहीं माना जा सकता है।





जब यह कहा जाता है कि पिछला निर्णय पूर्व न्याय है, तो इसका तात्पर्य है कि दावा किए गए अधिकार पर निर्णय किया जा चुका है और इसे फिर से उन्हीं पक्षों के बीच विवाद में नहीं उठाया जा सकता है। तथ्यों पर एक सक्षम न्यायालय का पूर्ववर्ती निर्णय जो अधिकार का आधार है और लेनदेन के निर्धारण के लिए लागू प्रासंगिक कानून जो अधिकार का स्रोत है, पूर्व न्याय है। विवाद के मामले पर पूर्ववर्ती निर्णय एक समग्र निर्णय होता है: कानून पर निर्णय नहीं हो सकता है। तथ्यों पर निर्णय से अलग किया जा सकता है, जिस पर अधिकार आधारित है। कानून के किसी मुद्दे पर निर्णय, उन्हीं पक्षों के बीच बाद की कार्यवाही में पूर्व न्याय के रूप में होगा, यदि पश्चातवर्ती कार्यवाही का विवाद विषय पूर्ववर्ती कार्यवाही के समान ही है, लेकिन तब नहीं जब कार्रवाई का कारण भिन्न हो, न ही जब पहले के निर्णय के बाद कानून को किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा बदल दिया गया हो, न ही जब निर्णय पहले की कार्यवाही की सुनवाई करने के लिए न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से संबंधित हो, न ही जब पहले के निर्णय ने किसी ऐसे संव्यहार को वैध घोषित किया हो जो विधि द्वारा निषिद्ध है।

[... ... .]





10. न्यायालय की अधिकारिता से संबंधित प्रश्न को न्यायालय के त्रुटिपूर्ण निर्णय को अंतिम रूप से अवधारित नहीं माना जा सकता। यदि न्यायालय कानून की गलत व्याख्या के द्वारा यह मानता है कि उसके पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, तो हमारे निर्णय के अनुसार यह प्रश्न पूर्व न्याय के रूप में कार्य नहीं करेगा। इसी प्रकार, यदि न्यायालय त्रुटिपूर्ण निर्णय द्वारा ऐसा अधिकार क्षेत्र ग्रहण करता है जो उसके पास कानून के तहत नहीं है, तो यह प्रश्न उन्हीं पक्षों के बीच पूर्व न्याय के रूप में लागू नहीं हो सकता है, चाहे बाद के मुकदमे में कार्यवाई का कारण समान हो या अन्यथा।

11. यह सही है कि पूर्व न्याय के नियम के आवेदन का अवधारण करने में न्यायालय पहले के निर्णय की सत्यता या अन्यथा से चिंतित नहीं है। यदि कोई मुद्दा पूरी तरह से तथ्य पर आधारित है, तो सक्षम न्यायालय द्वारा पहले की कार्यवाही में निर्णित किया गया मामला उन्हीं पक्षकारों के बीच पश्चातवर्ती वाद में अंतिम रूप से निर्णित माना जाना चाहिए और उसे फिर से नहीं उठाया जा सकता। उन्हीं पक्षकारों के बीच पहले की कार्यवाही में अवधारित विधि और तथ्य का मिश्रित प्रश्न, उसी कारण से, उन्हीं पक्षकारों के बीच पश्चातवर्ती कार्यवाही में





प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है। लेकिन, जहां निर्णय विधि के प्रश्न पर है, अर्थात् किसी कानून की व्याख्या, तो यह उन्हीं पक्षों के बीच बाद की कार्यवाही में पूर्व न्याय के रूप में लागू होगा, जहां कार्रवाई का कारण समान है, क्योंकि सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 में 'मुद्दे का मामला' का अर्थ है पक्षों के बीच मुकदमा चलाया जाने वाला अधिकार, अर्थात् वे तथ्य जिन पर अधिकार का दावा किया जाता है या अस्वीकार किया जाता है और उस मुद्दे के निर्धारण के लिए लागू कानून। तथापि, जहां प्रश्न विशुद्ध रूप से विधि का है और यह न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से संबंधित है या न्यायालय के किसी ऐसे निर्णय से संबंधित है जो किसी ऐसी चीज को मंजूरी देता है जो अवैध है, वहां पूर्व न्याय के नियम का सहारा लेकर निर्णय से प्रभावित पक्ष को वैधता को चुनौती देने से नहीं रोका जाएगा।

उस आदेश को पूर्व न्याय के नियम के तहत पारित किया जाना चाहिए, क्योंकि प्रक्रिया के नियम देश के कानून का स्थान नहीं ले सकता है।"

39. कानून की उपर्युक्त स्थिति को देखते हुए यह स्पष्ट है कि तकनीकी कानूनी सिद्धांत के रूप में पूर्व न्याय, उसी पक्ष को उसी मुद्दे पर फिर से मुकदमा चलाने से



रोकता है जिसे न्यायालय द्वारा पहले ही अंतिम रूप से निर्धारित किया जा चुका है। उपरोक्त तथ्यात्मक और कानूनी स्थिति को देखते हुए और मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा एमपी क्रमांक 1322/1994 में पारित आदेश के मद्देनजर रिट याचिका को बाद में वापस लेना जिसमें याचिकाकर्ता ने अवार्ड के लाभों को प्रदान करने की प्रार्थना की है, उसे पूर्व न्याय के अंतर्गत नहीं माना जा सकता है, इस प्रकार याचिकाकर्ता द्वारा उठाई गई आपत्ति कि उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा पारित पश्चातवर्ती कार्यवाही एवं आदेश पूर्व न्याय से बाधित है, खारिज किए जाने योग्य है। तदनुसार इसे खारिज किया जाता है और बिंदु क्रमांक 2 का उत्तर, प्रत्यर्थागण के पक्ष में दिया जाता है।

**बिन्दु सं.3.**

40. बिन्दु क्रमांक 3 का निर्धारण करने के लिए इस न्यायालय द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 की धारा 33(सी) का उद्धरण देना समीचीन है जो इस प्रकार है:-

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 (सी)

33 सी. नियोजक से देय धन की वसूली -(1) जहां किसी कर्मचारी को किसी समझौते या पंचाट के अधीन या अध्याय वी ए या अध्याय वी बी के उपबंधों के अधीन नियोजक से कोई धन देय है, वहां कर्मचारी स्वयं या उसके द्वारा इस निमित्त लिखित रूप में प्राधिकृत कोई अन्य व्यक्ति या कर्मचारी की मृत्यु की दशा में उसका समनुदेशिती या उत्तराधिकारी, वसूली के किसी अन्य ढंग पर प्रतिकूल प्रभाव डाले



बिना, उसको देय धन की वसूली के लिए समुचित सरकार को आवेदन कर सकता है और यदि समुचित सरकार का यह समाधान हो जाता है कि कोई धन इस प्रकार देय है तो वह उस रकम के लिए कलेक्टर को प्रमाणपत्र जारी करेगी जो उसे भू-राजस्व के बकाया के समान वसूलने के लिए आगे बढ़ेगा:

परन्तु ऐसा प्रत्येक आवेदन उस तारीख से एक वर्ष के भीतर किया जाएगा, जिसको नियोक्ता से कर्मचारी को धनराशि प्राप्त हुई थी: बशर्ते कि किसी ऐसे आवेदन पर एक वर्ष की उक्त अवधि की समाप्ति के पश्चात् भी विचार किया जा सकेगा, यदि समुचित सरकार का यह समाधान हो जाए कि आवेदक के पास उक्त अवधि के भीतर आवेदन न करने का पर्याप्त कारण था।

(2) जहां कोई कर्मकार नियोजक से कोई धन या कोई लाभ प्राप्त करने का हकदार है, जिसकी गणना धन के रूप में की जा सकती है और यदि देय धन की रकम के बारे में या उस रकम के बारे में जिस पर ऐसे लाभ की गणना की जानी चाहिए, कोई प्रश्न उठता है, तो उस प्रश्न का निर्णय, इस अधिनियम के अधीन बनाए जा सकने वाले किन्हीं नियमों के अधीन रहते हुए, ऐसे श्रम न्यायालय द्वारा किया जा सकेगा, जिसे समुचित सरकार इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे; [तीन मास से अनधिक अवधि के भीतर:] परन्तु जहां श्रम न्यायालय का पीठासीन



अधिकारी ऐसा करना आवश्यक या समीचीन समझता है, वहां वह, कारणों को लेखबद्ध करके, ऐसी अवधि को ऐसी अतिरिक्त अवधि के लिए बढ़ा सकेगा, जितनी वह ठीक समझे।

(3) किसी लाभ के धन मूल्य की गणना करने के प्रयोजनों के लिए, यदि श्रम न्यायालय ऐसा ठीक समझे, एक आयुक्त नियुक्त कर सकेगा जो आवश्यक साक्ष्य लेने के पश्चात् श्रम न्यायालय को एक रिपोर्ट व्यक्त करेगा और श्रम न्यायालय आयुक्त की रिपोर्ट तथा मामले की अन्य परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् राशि का निर्धारण करेगा।

(4) श्रम न्यायालय का निर्णय उसके द्वारा समुचित सरकार को भेजा जाएगा और श्रम न्यायालय द्वारा देय पाई गई कोई राशि उपधारा (1) में उपबंधित रीति से वसूल की जा सकेगी।

(5) जहां एक ही नियोजक के अधीन नियोजित कर्मकार उससे कोई धन या कोई लाभ प्राप्त करने के हकदार हैं, जिसकी गणना धन के रूप में की जा सकती है, वहां, इस निमित्त बनाए जा सकने वाले नियमों के अधीन रहते हुए, देय रकम की वसूली के लिए एक ही आवेदन ऐसे कर्मकारों की किसी भी क्रमांक की ओर से या उनके संबंध में किया जा सकेगा।

स्पष्टीकरण.—इस धारा में "श्रम न्यायालय" के अंतर्गत किसी राज्य में प्रवृत्त औद्योगिक विवादों के अन्वेषण और निपटारे से संबंधित किसी





विधि के अधीन गठित कोई न्यायालय भी है।

41. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने व्यक्त किया कि औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33(सी)(1) के तहत कार्यवाही शुरू करने के लिए उत्तरदाता क्रमांक 3 पर यह दायित्व है कि वह यह साबित करने के लिए सामग्री व्यक्त करे कि उत्तरदाता क्रमांक 3 द्वारा व्यक्त दावे का पूर्व निर्णय हुआ था और दावे के किसी पूर्व निर्णय के अभाव में। उत्तरदाता क्रमांक 1 ने विवादित आदेश पारित करके अवैधता की है। उन्होंने आगे कहा कि उत्तरदाता क्रमांक 3 यह साबित करने में सक्षम नहीं है कि कथित 135 सदस्यों ने याचिकाकर्ता के साथ काम किया है और वेतन का बकाया पाने के लिए विभागीय होने का अधिकार अर्जित किया है। ऐसी किसी भी सामग्री के अभाव में कार्यवाही अधिकार क्षेत्र से बाहर है और इसे रद्द किया जाना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि इस मुद्दे पर पूर्व निर्णय के अभाव में उत्तरदाता नंबर 1 को 28.12.2018 का आदेश और उसके बाद कारण बताओ नोटिस पारित नहीं करना चाहिए था और यह आईडीएक्ट की धारा 33 सी (2) के तहत प्रदत्त अधिकार क्षेत्र से परे है और याचिका की अनुमति देने के लिए प्रार्थना करेंगे।

42. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्तागण द्वारा इस पर कड़ी आपत्ति करते हुए व्यक्त किया गया कि चूंकि भावे अवार्ड श्रमिकों के पक्ष में था और याचिकाकर्ता द्वारा रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं रखी गई थी कि अवार्ड का पूरी तरह से पालन किया गया है, चूंकि उत्तरदाता क्रमांक 3 के सदस्य के पक्ष में ऐसा पूर्व विद्यमान अधिकार उपलब्ध था, इसलिए उत्तरदाता क्रमांक 1 ने सही ढंग से आदेश पारित किया है जो इस न्यायालय



द्वारा हस्तक्षेप किए जाने औचित्य नहीं है।

43. औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 सी के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि यह निष्पादन कार्यवाही की प्रकृति का है, जो श्रमिकों को बकाया राशि वसूलने के लिए निर्मित की गई है। धारा 33 सी (1) और (2) के तहत विधानमंडल ने त्वरित उपाय प्रदान किया है। कामगारों को किसी समझौते या अवार्ड का लाभ प्राप्त करने के लिए, जो उन्हें देय हैं और धन के रूप में गणना करने योग्य हैं, उन उप-धाराओं के तहत कार्यवाही के माध्यम से वसूल किया जा सकता है। धारा 33 सी की उप-धारा (1) और उप-धारा (2) के बीच अंतर मुख्य रूप से प्रक्रियात्मक पहलू में है, न कि इन दो उप-धाराओं द्वारा प्रदत्त कामगारों के किसी भी मूल अधिकार के साथ। उप-धारा (1) तब लागू होती है जब किसी कामगार के स्वयं या उसकी मृत्यु के मामले में किसी अन्य व्यक्ति या उत्तराधिकारियों के आवेदन पर, उपयुक्त सरकार को यह विश्वास हो जाता है कि दावा की गई रकम उस कामगार को देय है। उस संतुष्टि पर पहुंचने पर, सरकार राशि की वसूली के लिए इस उप-धारा के तहत कार्रवाई शुरू कर सकती है बशर्ते कि राशि निर्धारित हो और उसके लिए किसी न्याय निर्णयन की आवश्यकता न हो। उपयुक्त सरकार के पास उप-धारा (1) के तहत किसी भी कामगार को देय राशि निर्धारित करने की शक्ति नहीं है और यह निर्धारण केवल उप-धारा (2) के तहत श्रम न्यायालय द्वारा या अधिनियम की धारा 10(1) के तहत संदर्भ में किया जा सकता है। उप-धारा (2) के तहत श्रम न्यायालय द्वारा निर्धारण किए जाने के बाद भी श्रम न्यायालय द्वारा निर्धारित राशि उप-धारा (1) द्वारा प्रदान



की गई संक्षिप्त और त्वरित प्रक्रिया के माध्यम से वसूल की जा सकती है। उप-धारा (1) उप-धारा (2) के दायरे और संचालन को नियंत्रित या प्रभावित नहीं करती है जो उप-धारा (1) की तुलना में दायरे में व्यापक है। इसके अलावा धारा 33 सी (2) के तहत प्रदत्त अधिकार वसूली के किसी भी अन्य तरीके के अलावा मौजूद हैं जो कामगार के पास कानून के तहत है। धारा 33 सी (1) और 33 सी(2) की योजना का विश्लेषण यह दर्शाता है कि दोनों उप-धाराओं के बीच का अंतर बिल्कुल स्पष्ट है। उपधारा (2) उन मामलों से संबंधित है जहां किसी कर्मचारी को किसी समझौते या पंचाट के तहत या अध्याय वीए या वीबी के प्रावधानों के तहत नियोक्ता से पैसा मिलना है, उपधारा (2) उन मामलों से संबंधित है जहां कोई कर्मचारी नियोक्ता से कोई पैसा या कोई लाभ प्राप्त करने का हकदार है जो पैसे के रूप में गणना करने योग्य है।

44. इस प्रकार, जहां किसी समझौते के तहत दायित्वों से मिलने वाली कर्मकारों को देय राशि पहले से निर्धारित और सुनिश्चित की जाती है या किसी अंकगणितीय गणना या सरल सत्यापन द्वारा प्राप्त की जा सकती है और केवल यह जांच करने की आवश्यकता है कि यह कर्मकार को देय है या नहीं, अधिनियम की धारा 33 सी(1) के तहत संक्षिप्त कार्यवाही का सहारा लेना न केवल उचित है बल्कि कर्मकारों को परेशान होने से बचाने के लिए वांछनीय भी है। धारा 33 सी की उपधारा (1) कर्मकारों को किसी अवार्ड या समझौते के तहत या अध्याय-वी ए के प्रावधानों के तहत उन्हें देय किसी भी धन की वसूली के लिए प्रमाणपत्र जारी करने के लिए उपयुक्त



सरकार को आवेदन करने का अधिकार देती है और सरकार यदि संतुष्ट हो कि कर्मकारों को एक विशिष्ट राशि देय है, तो वह देय राशि की वसूली के लिए प्रमाणपत्र जारी करने के लिए बाध्य है। सरकार द्वारा कलेक्टर को अपेक्षित प्रमाणपत्र जारी किए जाने के बाद, कलेक्टर का यह वैधानिक कर्तव्य है कि वह उसे जारी किए गए प्रमाणपत्र के तहत देय राशि वसूल करे। इस प्रक्रिया का उद्देश्य देय राशि की वसूली का एक त्वरित, सस्ता और संक्षिप्त तरीका प्रदान करना है, जिसे नियोक्ता ने गलत तरीके से रोक रखा है। इसलिए, यह इस प्रकार है कि जहां देय राशि वी डी ए जैसी पूर्व निर्धारित राशि के आधार पर है, जिसकी दर निपटान और अवार्ड के संदर्भ में निर्धारित की जाती है, निपटान और अवार्ड के संदर्भ में या अध्याय VA या VB के तहत निर्धारित की जाती है और वह अवधि जिसके लिए बकाया का दावा किया गया है, भी ज्ञात है, तो मामला उप-धारा (1) के अंतर्गत आएगा क्योंकि केवल राशि की गणना की जानी अपेक्षित है।

45. याचिकाकर्ता ने अपनी रिट याचिका में स्पष्ट रूप से कहा है कि जब ठेका श्रमिकों के विभागीयकरण के लिए मध्यस्थता कार्यवाही शुरू की गई थी, तब उनके सदस्यों का प्रतिनिधित्व करने वाले संघ ने श्रमिकों की कोई सूची व्यक्त नहीं की थी, जिसे अवार्ड पारित होने पर भी दर्शाया गया है। यहां तक कि श्रम विभाग जो पिछली रिट याचिका डब्ल्यूपीएल क्रमांक 5920/2007 में उत्तरदाता क्रमांक 1 से 4 था, ने भी अपने रिटर्न में स्पष्ट रूप से कहा है कि उत्तरदाता क्रमांक 2 और 3 ने 135 श्रमिकों की सूची व्यक्त नहीं की है, लेकिन उन्होंने रिट याचिका क्रमांक



1322/1994 में पहली बार सूची व्यक्त की है, इस प्रकार 135 श्रमिकों का विभागीयकरण का अधिकार स्वयं ही विवादित तथ्य बन जाता है, जिस पर उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा औद्योगिक अधिनियम की धारा 33 सी(1) के तहत आवेदन पर निर्णय लेते समय निर्णय नहीं लिया जा सकता है, क्योंकि उनके पक्ष में कोई स्थायी अधिकार अर्जित नहीं हुआ है।

46. धारा 33 सी के तहत उपयुक्त सरकार की शक्ति और अधिकार क्षेत्र से संबंधित मुद्दा अब अस्तित्व में नहीं है और यह माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विभिन्न निर्णयों में विचार के लिए आया है, इनमें से कुछ निर्णय पंजाब नेशनल बैंक (सुप्रा), सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया (सुप्रा) और फैब्रिल गैसोसा (सुप्रा) तथा हमदर्द (वक्फ) सुप्रा हैं। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने बॉम्बे केमिकल इंडस्ट्रियल बनाम उप श्रम आयुक्त और अन्य के मामले में सभी निर्णयों पर विचार किया है और निम्न प्रकार से निर्णय दिया है:-

8. स्थापित विधि के अनुसार, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 सी(2) के तहत एक आवेदन में, श्रम न्यायालय के पास कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है और वह हकदारी के विवाद या कामगारों के दावे के आधार पर निर्णय नहीं ले सकता है। यह केवल उस अवार्ड या निपटान की व्याख्या कर सकता है जिस पर दावा आधारित है। जैसा कि इस न्यायालय ने गणेश रजक और अन्य (सुप्रा) के मामले में माना है, औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 सी(2) के तहत श्रम



न्यायालय का अधिकार क्षेत्र निष्पादन न्यायालय के समान है। कानून के स्थापित प्रस्ताव के अनुसार कामगारों के विवादित दावे के पूर्व निर्णय या मान्यता के बिना, कामगारों द्वारा दावा किए गए वेतन के बकाया और/या वेतन के अंतर की गणना के लिए कार्यवाही औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(सी)(2) के तहत अनुरक्षणीय नहीं होगी। (देखें दिल्ली नगर निगम बनाम गणेश रजक और अन्य (1995) 1 एससीसी 235)।

9. कंकूबेन (सुप्रा) के मामले में प्रतिपादित किया गया है कि जब भी कोई कर्मचारी अपने नियोक्ता से कोई पैसा या कोई लाभ प्राप्त करने का हकदार होता है, जिसे पैसे के रूप में गणना की जा सकती है और जिसे वह अपने नियोक्ता से प्राप्त करने का हकदार है और उसे ऐसे लाभ से वंचित किया जाता है, तो वह आईडी अधिनियम की धारा 33-सी (2) के तहत श्रम न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता है। यह भी देखा गया है कि धारा के तहत लागू किए जाने वाले लाभ आई.डी अधिनियम की धारा 33 सी (2) के तहत अनिवार्य रूप से पहले से मौजूद लाभ या पहले से मौजूद अधिकार से मिलने वाला लाभ होता है। एक ओर पहले से मौजूद अधिकार या लाभ और दूसरी ओर न्यायोचित और उचित माने जाने वाले अधिकार या लाभ के बीच का अंतर बहुत महत्वपूर्ण है। पहला अधिकार श्रम न्यायालय के





अधिकार क्षेत्र में आता है जो आईडी अधिनियम की धारा 33-सी (2) के तहत शक्तियों का प्रयोग करता है जबकि दूसरा अधिकार या लाभ इसके अंतर्गत नहीं आता है।

10. इस न्यायालय द्वारा उपरोक्त निर्णयों में निर्धारित कानून को मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए, जब इस मुद्दे पर कोई पूर्व निर्णय नहीं हुआ था कि क्या उत्तरदाता क्रमांक 2 यहां उत्तरदाता क्रमांक 2 द्वारा दावा किए गए अनुसार सेल्समैन के रूप में रोजगार में था और एक गंभीर विवाद उठाया गया था कि उत्तरदाता क्रमांक 2 कभी भी सेल्समैन के रूप में रोजगार में नहीं था और उत्तरदाता क्रमांक 2 द्वारा भरोसा किए गए दस्तावेजों पर अपीलकर्ता द्वारा गंभीर रूप से विवाद किया गया था और अपीलकर्ता की ओर से यह मामला था कि वे दस्तावेज जाली और/या झूठे हैं, उसके बाद श्रम न्यायालय को औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33 (सी) (2) के तहत आवेदन पर आगे नहीं बढ़ना चाहिए था। श्रम न्यायालय को उत्तरदाता क्रमांक 2 को संदर्भ के माध्यम से उचित कार्यवाही शुरू करने और अपने अधिकार को स्पष्ट करने और/या निर्णय लेने के लिए वापस भेज देना चाहिए था।

11. इसलिए, श्रम न्यायालय द्वारा पारित आदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(सी)(2) के तहत प्रदत्त अधिकार क्षेत्र से परे



था। उच्च न्यायालय ने उपरोक्त तथ्यों की सराहना नहीं की है और औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(सी)(2) के तहत श्रम न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के दायरे और दायरे पर ध्यान दिए बिना इसकी पुष्टि की है।

12. उपरोक्त के मद्देनजर और ऊपर बताए गए कारणों से वर्तमान अपील सफल होती है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित निर्णय और आदेश तथा साथ ही श्रम न्यायालय द्वारा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 33(सी)(2) के तहत विविध मामले क्रमांक 26/2012 में पारित आदेश को अपास्त किया जाता है। उत्तरदाता क्रमांक 2 को औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत उपलब्ध किसी भी अन्य उपाय का लाभ उठाने के लिए विवश किया जाता है, जिसमें अपीलकर्ता के कर्मचारी के रूप में उसके द्वारा दावा किए गए अधिकार का न्याय निर्णयन करने का संदर्भ शामिल है। जब भी ऐसी कार्यवाही शुरू की जाती है, तो उस पर कानून के अनुसार और उसके गुण-दोष के आधार पर तथा किसी भी तरह से वर्तमान आदेश से प्रभावित हुए बिना विचार किया जाना चाहिए, क्योंकि इस न्यायालय ने अपीलकर्ता और उत्तरदाता क्रमांक 2 के बीच नियोक्ता-कर्मचारी संबंध के पहलू पर किसी भी पक्ष के पक्ष में कुछ भी व्यक्त नहीं किया है। वर्तमान अपील उपरोक्त टिप्पणियों के साथ और पूर्वोक्त सीमा तक स्वीकार की





जाती है। कोई व्यय नहीं।

47. उपर्युक्त विधिक स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए एवं इस तथ्य को विचार में लेते हुए कि जब अवार्ड पारित किया गया था, तब उत्तरदाता क्रमांक 2/3 द्वारा 135 सदस्यों की सूची प्रस्तुत नहीं की जा सकी थी, क्योंकि यूनियन के सदस्य विशेष रूप से 135 श्रमिकों की ऐसी पात्रता विवादित तथ्य हैं, जिन्हें IDA अधिनियम की धारा 33C(1) के तहत आवेदन पर निर्णय लेते समय किसी भी पूर्व-मौजूदा अधिकार के अभाव में न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है। इसलिए, उत्तरदाता क्रमांक 1 द्वारा की गई कार्यवाही, दिनांक 28.12.2018 का विवादित आदेश, दिनांक 15.04.2019 और 22.08.2019 का कारण बताओ नोटिस (अनुलग्नक P/1) निरस्त किए जाने योग्य है। तदनुसार निरस्त किया जाता है।

48. इस तथ्य को विचार में लेते हुए कि भावे अवार्ड के परिप्रेक्ष्य में प्रत्यर्थीगण ने संविदा कर्मचारी को विभागीय बना दिया है, उत्तरदाता क्रमांक 2 और 3 को समुचित सरकार के समक्ष औद्योगिक विवाद उठाने की स्वतंत्रता है, जो विधि अनुसार उसका निर्णय करेगी और यदि विवाद का निपटारा नहीं होता है तो मामले को श्रम न्यायालय को भेजा जाएगा, जिसके पास संविदा कर्मचारी के विभागीयकरण के दावे से संबंधित विवाद का निर्णय करने का क्षेत्राधिकार है।

49. उपर्युक्त अवलोकन और निर्देश के साथ, रिट याचिका स्वीकार की जाती है।

Sd/-

(नरेन्द्र कुमार व्यास)

न्यायाधीश



**(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)**

**अस्वीकरण:** हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

